योग का संक्षिप्त इतिहास एवं विकास:

परिचय : योग तत्वत: बहुत सूक्ष्म विज्ञान पर आधारित एक आध्यात्मि विषय है जो मन एवं शरीर के बीच सामंजस्य स्थापित करने पर ध्यान देता है। यह स्वस्थ जीवन - यापन की कला एवं विज्ञान है। योग शब्द संस्कृत की युज धातु से बना है जिसका अर्थ जुड़ना या एकजुट होना या शामिल होना है। योग से जुड़े ग्रंथों के अनुसार योग करने से व्यक्ति की चेतना ब्रह्मांड की चेतना से जुड़ जाती है जो मन एवं शरीर, मानव एवं प्रकृति के बीच परिपूर्ण सामंजस्य का द्योतक है। आधुनिक वैज्ञानिकों के अनुसार ब्रह्मांड की हर चीज उसी परिमाण नभ की अभिव्यक्ति मात्र है। जो भी अस्तित्व की इस एकता को महसूस कर लेता है उसे योग में स्थित कहा जाता है और उसे योगी के रूप में पुकारा जाता है जिसने मुक्त अवस्था प्राप्त कर ली है जिसे मुक्ति, निर्वाण या मोक्ष कहा जाता है। इस प्रकार, योग का लक्ष्य आत्म-अनुभूति, सभी प्रकार के कष्टों से निजात पाना है जिससे मोक्ष की अवस्था या कैवल्य की अवस्था प्राप्त होती है। जीवन के हर क्षेत्र में आजादी के साथ जीवन - यापन करना, स्वास्थ्य एवं सामंजस्य योग करने के प्रमुख उद्देश्य होंगे। योग का अभिप्राय एक आंतरिक विज्ञान से भी है जिसमें कई तरह की विधियां शामिल होती हैं जिनके माध्यम से मानव इस एकता को साकार कर सकता है और अपनी नियति को अपने वश में कर सकता है। चूंकि योग को बड़े पैमाने पर सिंधु - सरस्वती घाटी सभ्यता, जिसका इतिहास 2700 ईसा पूर्व से है, के अमर सांस्कृतिक परिणाम के रूप में बड़े पैमाने पर माना जाता है, इसलिए इसने साबित किया है कि यह मानवता के भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों तरह के उत्थान को संभव बनाता है। बुनियादी मानवीय मूल्य योग साधना की पहचान हैं।

योग का संक्षिप्त इतिहास एवं विकास:

ऐसा माना जाता है कि जब से सभ्यता शुरू हुई है तभी से योग किया जा रहा है। योग के विज्ञान की उत्पत्ति हजारों साल पहले हुई थी, पहले धर्मों या आस्था के जन्म लेने से काफी पहले हुई थी। योग विद्या में शिव को पहले योगी या आदि योगी तथा पहले गुरू या आदि गुरू के रूप में माना जाता है।

कई हजार वर्ष पहले, हिमालय में कांति सरोवर झील के तटों पर आदि योगी ने अपने प्रबुद्ध ज्ञान को अपने प्रसिद्ध सप्तऋषि को प्रदान किया था। सत्पऋषियों ने योग के इस ताकतवर विज्ञान को एशिया, मध्य पूर्व, उत्तरी अफ्रीका एवं दक्षिण अमरीका सहित विश्व के भिन्न - भिन्न भागों में पहुंचाया। रोचक बात यह है कि आधुनिक विद्वानों ने पूरी दुनिया में प्राचीन संस्कृतियों के बीच पाए गए घनिष्ठ समानांतर को नोट किया है। तथापि, भारत में ही योग ने अपनी सबसे पूर्ण अभिव्यक्ति प्राप्त की। अगस्त नामक सप्तऋषि, जिन्होंने पूरे भारतीय उप महाद्वीप का दौरा किया, ने यौगिक तरीके से जीवन जीने के इर्द-गिर्द इस संस्कृति को गढ़ा।

योग करते हुए पित्रों के साथ सिंधु - सरस्वती घाटी सभ्यता के अनेक जीवाश्म अवशेष एवं मुहरें भारत में योग की मौजूदगी का संकेत देती हैं।योग करते हुए पित्रों के साथ सिंधु - सरस्वती घाटी सभ्यता के अनेक जीवाश्म अवशेष एवं मुहरें भारत में योग की मौजूदगी का सुझाव देती हैं। देवी मां की मूर्तियों की मुहरें, लैंगिक प्रतीक तंत्र योग का सुझाव देते हैं। लोक परंपराओं, सिंधु घाटी सभ्यता, वैदिक एवं उपनिषद की विरासत, बौद्ध एवं जैन परंपराओं, दर्शनों, महाभारत एवं रामायण नामक महाकाव्यों, शैवों, वैष्णवों की आस्तिक परंपराओं एवं तांत्रिक परंपराओं में योग की मौजूदगी है। इसके अलावा, एक आदि या शुद्ध योग था जो दक्षिण एशिया की रहस्यवादी परंपराओं में अभिव्यक्त हुआ है। यह समय ऐसा था जब योग गुरू के सीधे मार्गदर्शन में किया जाता था तथा इसके आध्यात्मिक मूल्य को विशेष महत्व दिया जाता था। यह उपासना का अंग था तथा योग साधना उनके संस्कारों में रचा-बसा था। वैदिक काल के दौरान सूर्य को सबसे अधिक महत्व दिया गया। हो सकता है कि इस प्रभाव की वजह से आगे चलकर 'सूर्य नमस्कार' की प्रथा का आविष्कार किया गया हो। प्राणायाम दैनिक संस्कार का हिस्सा था तथा यह समर्पण के लिए किया जाता था। हालांकि पूर्व वैदिक काल में योग किया जाता था, महान संत महर्षि पतंजलि ने अपने योग सूत्रों के माध्यम से उस समय विद्यमान योग की प्रथाओं, इसके आशय एवं इससे संबंधित ज्ञान को व्यवस्थित एवं कूटबद्ध किया। पतंजलि के बाद, अनेक ऋषियों एवं योगाचार्यों ने अच्छी

तरह प्रलेखित अपनी प्रथाओं एवं साहित्य के माध्यम से योग के परिरक्षण एवं विकास में काफी योगदान दिया।

सूर्य नमस्कारपूर्व वैदिक काल (2700 ईसा पूर्व) में एवं इसके बाद पतंजलि काल तक योग की मौजूदगी के ऐतिहासिक साक्ष्य देखे गए। मुख्य स्रोत, जिनसे हम इस अवधि के दौरान योग की प्रथाओं तथा संबंधित साहित्य के बारे में सूचना प्राप्त करते हैं, वेदों (4), उपनिषदों (18), स्मृतियों, बौद्ध धर्म, जैन धर्म, पाणिनी, महाकाव्यों (2) के उपदेशों, पुराणों (18) आदि में उपलब्ध हैं।

अनंतिम रूप से 500 ईसा पूर्व - 800 ईस्वी सन के बीच की अवधि को श्रेष्ठ अवधि के रूप में माना जाता है जिसे योग के इतिहास एवं विकास में सबसे उर्वर एवं महत्वपूर्ण अवधि के रूप में भी माना जाता है। इस अवधि के दौरान, योग सूत्रों एवं भागवद्गीता आदि पर व्यास के टीकाएं अस्तित्व में आईं। इस अवधि को मुख्य रूप से भारत के दो महान धार्मिक उपदेशकों - महावीर एवं बुद्ध को समर्पित किया जा सकता है। महावीर द्वारा पांच महान व्रतों - पंच महाव्रतों एवं बुद्ध द्वारा अष्ठ मग्गा या आठ पथ की संकल्पना - को योग साधना की शुरूआती प्रकृति के रूप में माना जा सकता है। हमें भागवद्गीता में इसका अधिक स्पष्ट स्पष्टीकरण प्राप्त होता है जिसमें ज्ञान योग, भक्ति योग और कर्म योग की संकल्पना को विस्तार से प्रस्तुत किया गया है। तीन प्रकार के ये योग आज भी मानव की बुद्धिमत्ता के सर्वोच्च उदाहरण हैं तथा आज भी गीता में प्रदर्शित विधियों का अनुसरण करके लागों को शांति मिलती है। पतंजलि के योग सूत्र में न केवल योग के विभिन्न घटक हैं, अपितु मुख्य रूप से इसकी पहचान योग के आठ मार्गों से होती है। व्यास द्वारा योग सूत्र पर बहुत महत्वपूर्ण टीका भी लिखी गई। इसी अवधि के दौरान मन को महत्व दिया गया तथा योग साधना के माध्यम से स्पष्ट से बताया गया कि समभाव का अनुभव करने के लिए मन एवं शरीर दोनों को नियंत्रित किया जा सकता है। 800 ईसवी - 1700 ईसवी के बीच की अवधि को उत्कृष्ट अवधि के बाद की अवधि के रूप में माना जाता है जिसमें महन आचार्यत्रयों - आदि शंकराचार्य, रामानुजाचार्य और माधवाचार्य - के उपदेश इस अवधि के दौरान प्रमुख थे। इस अवधि के दौरान सुदर्शन, तुलसी दास, पुरंदर दास, मीराबाई के उपदेशों ने महान योगदान दिया। हठयोग परंपरा के नाथ योगी

जैसे कि मत्स्येंद्र नाथ, गोरख नाथ, गौरांगी नाथ, स्वात्माराम सूरी, घेरांडा, श्रीनिवास भट्ट ऐसी कुछ महान हस्तियां हैं जिन्होंने इस अवधि के दौरान हठ योग की परंपरा को लोकप्रिय बनाया।

1700 - 1900 ईसवी के बीच की अवधि को आधुनिक काल के रूप में माना जाता है जिसमें महान योगाचार्यों - रमन महर्षि, रामकृष्ण परमहंस, परमहंस योगानंद, विवेकानंद आदि ने राज योग के विकास में योगदान दिया है। यह ऐसी अवधि है जिसमें वेदांत, भक्ति योग, नाथ योग या हठ योग फला - फूला। शादंगा - गोरक्ष शतकम का योग, चतुरंगा - हठयोग प्रदीपिका का योग, सप्तंगा - घेरांडा संहिता का योग - हठ योग के मुख्य जड़सूत्र थे।

अब समकालीन युग में स्वास्थ्य के परिरक्षण, अनुरक्षण और संवर्धन के लिए योग में हर किसी की आस्था है। स्वमी विवेकानंद, श्री टी कृष्णमचार्य, स्वामी कुवालयनंदा, श्री योगेंद्र, स्वामी राम, श्री अरविंदो, महर्षि महेश योगी, आचार्य रजनीश, पट्टाभिजोइस, बी के एस आयंगर, स्वामी सत्येंद्र सरस्वती आदि जैसी महान हस्तियों के उपदेशों से आज
योग पूरी दुनिया में फैल गया है।

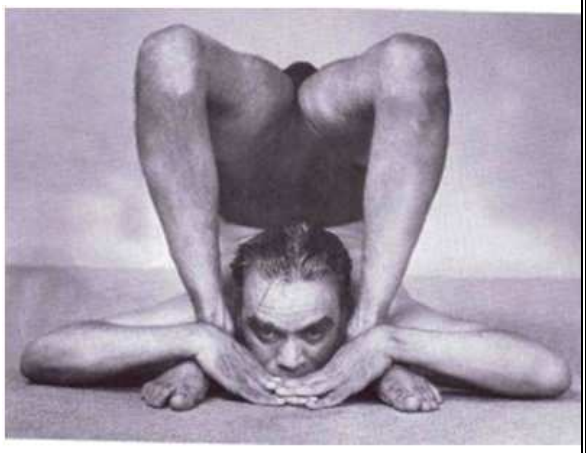

बी के एस आयंगर ''आयंगर योग'' के नाम से विख्यात योग शैली के संस्थापक थे तथा उनको दुनिया के सर्वश्रेष्ठ योग शिक्षकों में से एक के रूप में माना जाता है।भ्रातियों को दूर करना :

कई लोगों के लिए योग का अर्थ हठ योग एवं आसनों तक सीमित है। तथापि, योग सूत्रों में केवल तीन सूत्रों में आसनों का वर्णन आता है। मौलिक रूप से हठ योग तैयारी प्रक्रिया है जिससे कि शरीर ऊर्जा के उच्च स्तर को बर्दाश्त कर सके। प्रक्रिया शरीर से शुरू होती है फिर श्वसन, मन और अंतरतम की बारी आती है।

आम तौर पर योग को स्वास्थ्य एवं फिटनेस के लिए थिरेपी या व्यायाम की पद्धति के रूप में समझा जाता है। हालांकि शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य योग के स्वाभाविक परिणाम हैं, परंतु योग का लक्ष्य अधिक दूरगामी है। ''योग ब्रह्माण्ड से स्वयं का सामंजस्य स्थापित करने के बारे में है। यह सर्वोच्च स्तर की अनुभूति एवं सामंजस्य प्राप्त करने के लिए ब्रह्माण्ड से स्वयं की ज्यामिती को संरेखित करने की कला है।

योग किसी खास धर्म, आस्था पद्धति या समुदाय के मुताबिक नहीं चलता है; इसे सदैव अंतरतम की सेहत के लिए कला के रूप में देखा गया है। जो कोई भी तल्लीनता के साथ योग करता है वह इसके लाभ प्राप्त कर सकता है, उसका धर्म, जाति या संस्कृति जो भी हो। योग की परंपरागत शैलियां : योग के ये भिन्न - भिन्न दर्शन, परंपराएं, वंशावली तथा गुरू - शिष्य परंपराएं योग की ये भिन्न - भिन्न परंपरागत शैलियों के उद्भव का मार्ग प्रशस्त करती हैं, उदाहरण के लिए ज्ञान योग, भक्ति योग, कर्म योग, ध्यान योग, पतंजलि योग, कुंडलिनी योग, हठ योग, मंत्र योग, लय योग, राज योग, जैन योग, बुद्ध योग आदि। हर शैली के अपने स्वयं के सिद्धांत एवं पद्धतियां हैं जो योग के परम लक्ष्य एवं उद्देश्यों की ओर ले जाती हैं।

स्वास्थ्य एवं तंदरूस्ती के लिए योग की पद्धतियां : वड़े पैमाने पर की जाने वाली योग साधनाएं इस प्रकार हैं : यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि / साम्यामा, बंध एवं मुद्राएं, षटकर्म, युक्त आहार, युक्त कर्म, मंत्र जप आदि। यम अंकुश हैं तथा नियम आचार हैं। इनको योग साधना के लिए पहली आवश्यकता के रूप में माना जाता है। आसन, शरीर एवं मन की स्थिरता लाने में सक्षम 'कुर्यात तद आसनं स्थैर्यम...' के तहत काफी लंबी अवधि तक शरीर (मानसिक - शारीरिक) के विभिन्न पैटर्न को अपनाना, शरीर की मुद्रा बनाए रखने की सामर्थ्य प्रदान करना (अपने संरचनात्मक अस्तित्व की स्थिर चेतना) शामिल है।

प्राणायाम की विभिन्न मुद्राएंप्राणायाम के तहत अपने श्वसन की जागरूकता पैदा करना और अपने अस्तित्व के प्रकार्यात्मक या महत्वपूर्ण आधार के रूप में श्वसन को अपनी इच्छा से विनियमित करना शामिल है। यह अपने मन की चेतना को विकसित करने में मदद करता है तथा मन पर नियंत्रण रखने में भी मदद करता है। शुरूआती चरणों में, यह नासिकाओं, मुंह तथा शरीर के अन्य द्वारों, इसके आंतरिक एवं बाहरी मार्गों तथा गंतव्यों के माध्यम से श्वास - प्रश्वास की जागरूकता पैदा करके किया जाता है। आगे चलकर, विनियमित, नियंत्रित एवं पर्यवेक्षित श्वास के माध्यम से इस परिदृश्य को संशोधित किया जाता है जिससे यह जागरूकता पैदा होती है कि शरीर के स्थान भर रहे हैं (पूरक), स्थान भरी हुई अवस्था में बने हुए हैं (कुंभक) और विनियमित, नियंत्रित एवं पर्यवेक्षित प्रश्वास के दौरान यह खाली हो रहा है (रेचक)।

प्रत्याहार ज्ञानेंद्रियों से अपनी चेतना को अलग करने का प्रतीक है, जो बाहरी वस्तुओं से जुड़े रहने में हमारी मदद करती हैं। धारणा ध्यान (शरीर एवं मन के अंदर) के विस्तृत क्षेत्र का द्योतक है, जिसे अक्सर संकेंद्रण के रूप में समझा जाता है। ध्यान शरीर एवं मन के अंदर अपने आप को केंद्रित करना है और समाधि - एकीकरण।

बंध और मुद्राएं प्राणायाम से संबद्ध साधनाएं हैं। इनको योग की उच्चतर साधना के रूप में देखा जाता है क्योंकि इनमें मुख्य रूप से श्वसन पर नियंत्रण के साथ शरीर (शारीरिक - मानसिक) की कतिपय पद्धतियों को अपनाना शामिल है। इससे मन पर नियंत्रण और सुगम हो जाता है तथा योग की उच्चतर सिद्धि का मार्ग प्रशस्त होता है। षटकर्म विषाक्तता दूर करने की प्रक्रियाएं हैं तथा शरीर में संचित विष को निकालने में मदद करते हैं और ये नैदानिक स्वरूप के हैं।

युक्ताहार (सही भोजन एवं अन्य इनपुट) स्वस्थ जीवन के लिए उपयुक्त आहार एवं खान-पान की आदतों की वकालत करता है। तथापि, आत्मानुभूति, जिसे उत्कर्ष का मार्ग प्रशस्त होता है, में मदद करने वाली ध्यान की साधना को योग साधना के सार के रूप में माना जाता है।

योग साधना की मौलिक बातें :

योग हमारे शरीर, मन, भावना एवं ऊर्जा के स्तर पर काम करता है। इसकी वजह से मोटेतौर पर योग को चार भागों में बांटा गया है : कर्मयोग, जहां हम अपने शरीर का उपयोग करते हैं; भक्तियोग, जहां हम अपनी भावनाओं का उपयोग करते हैं; ज्ञानयोग, जहां हम मन एवं बुद्धि का प्रयोग करते हैं और क्रियायोग, जहां हम अपनी ऊर्जा का उपयोग करते हैं।

हम योग साधना की जिस किसी पद्धति का उपयोग करें, वे इन श्रेणियों में से किसी एक श्रेणी या अधिक श्रेणियों के तहत आती हैं। हर व्यक्ति इन चार कारकों का एक अनोखा संयोग होता है। ''योग पर सभी प्राचीन टीकाओं में इस बात पर जोर दिया गया है कि किसी गुरू के मार्गदर्शन में काम करना आवश्यक है।'' इसका कारण यह है कि गुरू चार मौलिक मार्गों का उपयुक्त संयोजन तैयार कर सकता है जो हर साधक के लिए आवश्यक होता है। योग शिक्षा : परंपरागत रूप से, परिवारों में ज्ञानी, अनुभवी एवं बुद्धिमान व्यक्तियों द्वारा (पश्चिम में कंवेंट में प्रदान की जानी वाली शिक्षा से इसकी तुलना की जा सकती है) और फिर आश्रमों में (जिसकी तुलना मठों से की जा सकती है) ऋषियों / मुनियों / आचार्यों द्वारा योग की शिक्षा प्रदान की जाती थी। दूसरी ओर, योग की शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति, अस्तित्व का ध्यान रखना है। ऐसा माना जाता है कि अच्छा, संतुलित, एकीकृत, सच पर चलने वाला, स्वच्छ, पारदर्शी व्यक्ति अपने लिए, परिवार, समाज, राष्ट्र, प्रकृति और पूरी मानवता के लिए अधिक उपयोगी होगा। योग की शिक्षा स्व की शिक्षा है। विभिन्न जीवंत परंपराओं तथा पाठों एवं विधियों में स्व के साथ काम करने के व्यौरों को रेखांकित किया गया है जो इस महत्वपूर्ण क्षेत्र में योगदान कर रहे हैं जिसे योग के नाम से जाना जाता है।

आजकल, योग की शिक्षा अनेक मशहूर योग संस्थाओं, योग विश्वविद्यालयों, योग कालेजों, विश्वविद्यालयों के योग विभागों, प्राकृतिक चिकित्सा कालेजों तथा निजी न्यासों एवं समितियों द्वारा प्रदान की जा रही है। अस्पतालों, औषधालयों, चिकित्सा संस्थाओं तथा रोगहर स्थापनाओं में अनेक

योग क्लीनिक, योग थेरेपी और योग प्रशिक्षण केंद्र, योग की निवारक स्वास्थ्य देख-रेख यूनिटें, योग अनुसंधान केंद्र आदि स्थापित किए गए हैं।

योग की धरती भारत में विभिन्न सामाजिक रीति-रिवाज एवं अनुष्ठान पारिस्थितिकी संतुलन, दूसरों की चिंतन पद्धति के लिए सहिष्णुता तथा सभी प्राणियों के लिए सहानुभूति के लिए प्रेम प्रदर्शित करते हैं। सभी प्रकार की योग साधना को सार्थक जीवन एवं जीवन-यापन के लिए रामबाण माना जाता है। व्यापक स्वास्थ्य, सामाजिक एवं व्यक्तिगत दोनों, के लिए इसका प्रबोधन सभी धर्मों, नस्लों एवं राष्ट्रीयताओं के लोगों के लिए इसके अभ्यास को उपयोगी बनाता है।

निष्कर्ष :

आजकल पूरी दुनिया में योग साधना से लाखों व्यक्तियों को लाभ हो रहा है, जिसे प्राचीन काल से लेकर आजतक योग के महान आचार्यों द्वारा परिरक्षित किया गया है। योग साधना का हर दिन विकास हो रहा है तथा यह अधिक जीवंत होती जा रही है।

योग का अर्थ, परिभाषा, उद्देश्य, प्रकार और महत्व

योग शब्द का शाब्दिक अर्थ जोड़ना या मिलन कराना है । योग शब्द के इस अर्थ का भारतीय संस्कृति में बहुत अधिक प्रयोग किया गया है । जैसे गणित शास्त्र में दो या दो से अधिक संख्याओं के जोड़ का योग कहते है । चिकित्सा शास्त्र में विभिन्न औषधियों के मिश्रण को योग कहते है, ज्योतिष शास्त्र में ग्रहों की विभिन्न स्थितियों को योग कहते है । इस प्रकार से बहुत से अन्य क्षेत्रों में योग शब्द का विभिन्न अर्थों में प्रयोग किया गया है। किन्तु हम आध्यात्मिक क्षेत्रों में इस शब्द के अर्थ पर विचार करते है तो वहाँ उसका अर्थ अपने आप से युक्त होना अर्थात् अपने स्वरूप में स्थिर हो जाना या जीवात्मा का परमात्मा से मिलन योग कहा जाता है ।

योग दर्शन में कहा है - ''तंद्रा द्रश्टु: स्वरूपेऽवस्थानम् ।'' जब चित का क्लिष्ट और अक्लिश्ट उभय प्रकार की वृतियों का अभाव या निरोध हो जाता है तब दृश्टा-आत्मा का स्व स्वरूप यानि ब्रह्मस्वरुप में स्थित हो जाता है ।

योग शब्द को संस्कृत व्याकरण के 'युज' धातु से उत्पन्न हुआ मानते है ।

संस्कृत व्याकरण के पाणिनी के गण पाठ में युज धातु तीन प्रकार से प्रयोग में लायी गई है जो इस प्रकार है - ''युज समाधौ' - (दिवादिगणीय) ''युजिर योगे'' - (अधदिगणीय) ''युज संयमने' - (चुरादिगणीय) इनमें प्रथम धातु का अर्थ समाधि है, द्वितीय धातु का अर्थ मिलन या संयोग तथा तृतीय धातु का अर्थ संयम है ।

योग का अर्थ

अधिकतर विद्वानों ने आध्यात्मिक क्षेत्र में योग शब्द का अर्थ प्रथम ''धातु'' युज समाधौ से ही निष्पन्न हुआ माना है । महर्षि व्यास भी योग शब्द का अर्थ करते हुए कहा है कि समाधि को ही योग कहते है । 'योग' शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा के युजिर् धातु से हुई है, जिसका अर्थ है-'सम्मिलित होना' या 'एक होना'। इस एकीकरण का अर्थ जीवात्मा तथा परमात्मा का एकीकरण अथवा मनुष्य के व्यक्तित्व के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक तथा आध्यात्मिक पक्षों के एकीकरण से लिया जा सकता है।

'योग' शब्द 'युज' धातु से बना है। संस्कृत व्याकरण में दो युज् धातुओं का उल्लेख है, जिनमें एक का अर्थ जोड़ना तथा दूसरे का मन: समाधि, अर्थात् मन की स्थिरता है। अर्थात् सामान्य रीति से योग का अर्थ सम्बन्ध करना तथा मानसिक स्थिरता करना है। इस प्रकार लक्ष्य तथा साधन के रूप में दोनों ही योग हैं। शब्द का उपयोग भारतीय योग दर्शन में दोनों अर्थों में हुआ है।

योग शब्द का अर्थ भिन्न-भिन्न प्रकार से लिया गया है। 'पाणिनीयों धतु पाठ' में योग का अर्थ- समाधि, संयोग एवं संयमन है।

'अमर कोश' में इसका अर्थ- कवच, साम-दाम आदि उपाय, ध्यान, संगति, युक्ति है।

'संस्कृत-हिन्दी कोश' में इसका अर्थ- जोड़ना, मिलाना, मिलाप, संगम, मिश्रण, संपर्क, स्पर्श, संबंध है। 'आकाशवाणी शब्द कोश' में इसका अर्थ- जुआ, गुलामी, बोझ, दबाव, बन्धन, जोड़ना, नत्थी करना, बाँध देना, जकड़ देना, जोतना, जुआ डालना, गुलाम बनाना लिया गया है।

'मानक अंग्रेजी-हिन्दी कोश' में योग का अर्थ- चिन्तन, आसन, बतलाया गया है। 'शब्द कल्पद्रुम' में योग का अर्थ- उपाय, ध्यान, संगति, है। 'ए प्रक्टिकल वैदिक डिक्सनरी' में योग शब्द का अर्थ- जोड़ना है। 'उर्दू-हिन्दी शब्द कोश' में योग शब्द का अर्थ- बैल की गर्दन पर रखा जाने वाला जुआ बतलाया गया है।

'योग' शब्द का सम्बन्ध 'युग' शब्द से भी है जिसका अर्थ 'जोतना' होता है, और जो अनेक स्थानों पर इसी अर्थ में वैदिक साहित्य में प्रयुक्त है। 'युग' शब्द प्राचीन आर्य-शब्दों का प्रतिनिधित्व करता है। यह जर्मन के जोक, (Jock) ऐंग्लो-सैक्सन (Anglo-Saxon) के गेओक (Geoc), इउक (Iuc), इओक (Ioc), लैटिन के इउगम (Iugum) तथा ग्रीक जुगोन (Zugon) की समकक्षता या समानार्थकता में देखा जा सकता है। गणितशास्त्र में दो या अधिक संख्याओं के जोड़ को योग कहा जाता है।

पाणिनी ने 'योग' शब्द की व्युत्पत्ति 'युजिर् योगे' ,'युज समाधो' तथा 'युज् संयमने' इन तीन धातुओं से मानी है। प्रथम व्युत्पत्ति के अनुसार 'योग' शब्द का अनेक अर्थों में प्रयोग किया गया है।,

जैसे - जोड़ना, मिलाना, मेल आदि। इसी आधार पर जीवात्मा और परमात्मा का मिलन योग कहलाता है। इसी संयोग की अवस्था को "समाधि" की संज्ञा दी जाती है जो कि जीवात्मा और परमात्मा की समता होती है।

महर्षि पतंजलि ने योग शब्द को समाधि के अर्थ में प्रयुक्त किया है। व्यास जी ने 'योग: समाधि:' कहकर योग शब्द का अर्थ समाधि ही किया है।

योग की परिभाषा

योग की परिभाषा योग शब्द एक अति महत्त्वपूर्ण शब्द है जिसे अलग-अलग रूप में परिभाषित किया गया है।

1. पातंजल योग दर्शन के अनुसार- योगष्चित्तवृत्ति निरोध: अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है।

2. महर्षि पतंजलि-

'योगष्चित्तवृत्तिनिरोधः' यो.सू.1/2

अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध करना ही योग है। चित्त का तात्पर्य, अन्त:करण से है। बाह्मकरण ज्ञानेन्द्रियां जब विषयों का ग्रहण करती है, मन उस ज्ञान को आत्मा तक पहुँचाता है। आत्मा साक्षी भाव से देखता है। बुद्धि व अहंकार विषय का निश्चय करके उसमें कर्तव्य भाव लाते है। इस सम्पूर्ण क्रिया से चित्त में जो प्रतिबिम्ब बनता है, वही वृत्ति कहलाता है।

यह चित्त का परिणाम है। चित्त दर्पण के समान है। अत: विषय उसमें आकर प्रतिबिम्बत होता है अर्थात् चित्त विषयाकार हो जाता है। इस चित्त को विषयाकार होने से रोकना ही योग है।

योग के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करते हुए महर्षि पतंजलि ने आगे कहा है-

'तदा द्रश्टु: स्वरूपेSवस्थानम्।। 1/3

अर्थात योग की स्थिति में साधक (पुरूष) की चित्तवृत्ति निरूद्धकाल में कैवल्य अवस्था की भाँति चेतनमात्र (परमात्म) स्वरूप रूप में स्थित होती है।

महर्षि पतंजलि ने योग को दो प्रकार से बताया है- 1. सम्प्रज्ञात योग 2.असम्प्रज्ञात योग सम्प्रज्ञात योग में तमोगुण गौणतम रूप से नाम रहता है। तथा पुरूष के चित्त में विवेक-ख्याति का अभ्यास रहता है। असम्प्रज्ञात योग में सत्त्व चित्त में बाहर से तीनों गुणों का परिणाम होना बन्द हो जाता है तथा पुरुष शुद्ध कैवल्य परमात्मस्वरूप में अवस्थित हो जाता है।

3. सांख्य दर्शन के अनुसार-

पुरुशप्रकृत्योर्वियोगेपि योगइत्यमिधीयते।

अर्थात् पुरुष एवं प्रकृति के पार्थक्य को स्थापित कर पुरुष का स्व स्वरूप में अवस्थित होना ही योग है।

4. महर्षि याज्ञवल्क्य -

'संयोग योग इत्युक्तो जीवात्मपरमात्मनो।'

अर्थात जीवात्मा व परमात्मा के संयोग की अवस्था का नाम ही योग है। कठोशनिषद् में योग के विषय में कहा गया है-

'यदा पंचावतिश्ठनते ज्ञानानि मनसा सह।

बुद्धिष्च न विचेश्टति तामाहु: परमां गतिम्।।

तां योगमिति मन्यन्ते स्थिरामिन्द्रियधारणाम्।

अप्रमत्तस्तदा भवति योगो हि प्रभावाप्ययौ।। कठो.2/3/10-11

अर्थात् जब पाँचों ज्ञानेन्द्रियां मन के साथ स्थिर हो जाती है और मन निश्चल बुद्धि के साथ आ मिलता है, उस अवस्था को 'परमगति' कहते है। इन्द्रियों की स्थिर धारणा ही योग है। जिसकी इन्द्रियाँ स्थिर हो जाती है, अर्थात् प्रमाद हीन हो जाता है। उसमें सुभ संस्कारो की उत्पत्ति और अशुभ संस्कारों का नाश होने लगता है। यही अवस्था योग है।

5. मैत्रायण्युपनिषद् -

एकत्वं प्राणमनसोरिन्द्रियाणां तथैव च.।

सर्वभाव परित्यागो योग इत्यभिधीयते।। **6/25**

अर्थात प्राण, मन व इन्द्रियों का एक हो जाना, एकाग्रावस्था को प्राप्त कर लेना, बाह्म विषयों से विमुख होकर इन्द्रियों का मन में और मन आत्मा में लग जाना, प्राण का निश्चल हो जाना योग है।

6. योगषिखोपनिषद् -

योSपानप्राणयोरैक्यं स्वरजोरेतसोस्तथा। सूर्याचन्द्रमसोर्योगो जीवात्मपरमात्मनो:।

एवंतुद्वन्द्व जालस्य संयोगो योग उच्यते।। 1/68-69

अर्थात् अपान और प्राण की एकता कर लेना, स्वरज रूपी महाशक्ति कुण्डलिनी को स्वरेत रूपी आत्मतत्त्व के साथ संयुक्त करना, सूर्य अर्थात् पिंगला और चन्द्र अर्थात् इड़ा स्वर का संयोग करना तथा परमात्मा से जीवात्मा का मिलन योग है।

7. लिंड्ग पुराण के अनुसार - लिंग पुराण में महर्षि व्यास ने योग का लक्षण किया है कि -

सर्वार्थ विषय प्राप्तिरात्मनो योग उच्यते।

अर्थात् आत्मा को समस्त विषयों की प्राप्ति होना योग कहा जाता है। उक्त परिभाषा में भी पुराणकार का अभिप्राय योगसिद्ध का फल बताना ही है। समस्त विषयों को प्राप्त करने का सामर्थ्य योग की एक विभूति है। यह योग का लक्षण नहीं है। वृत्तिनिरोध के बिना यह सामर्थ्य प्राप्त नहीं हो सकता।

8. अग्नि पुराण के अनुसार - अग्नि पुराण में कहा गया है कि

आत्ममानसप्रत्यक्षा विशिष्टा या मनोगति:तस्या ब्रह्मणि संयोग योग इत्यभि धीयते।। अग्नि पुराण (379)25

अर्थात् योग मन की एक विशिष्ठ अवस्था है जब मन मे आत्मा को और स्वयं मन को प्रत्यक्ष करने की योग्यता आ जाती है, तब उसका ब्रह्म के साथ संयोग हो जाता है।

संयोग का अर्थ है कि ब्रह्म की समरूपता उसमे आ जाती है। यह कमरूपता की स्थिति की योग है। अग्नि पुराण के इस योग लक्षण में पूवेक्ति याज्ञवल्क्य स्मृति के योग लक्षण से कोई भिन्नता नहीं है। मन का ब्रह्म के साथ संयोग वृत्तिनिरोध होने पर ही सम्भव है।

9. स्कन्द पुराण के अनुसार - स्कन्द पुराण भी उसी बात की पुष्टि कर रहा है जिसे अग्निपुराण और याज्ञवल्क्य स्मृति कह रहे है। स्कन्द पुराण में कहा गया है कि-

यव्समत्वं द्वयोरत्र जीवात्म परमात्मनो:।
सा नष्टसर्वसकल्प: समाधिरमिद्यीयते।।

परमात्मात्मनोयोडयम विभाग: परन्तप।

स एव तु परो योग: समासात्क थितस्तव।।

यहां प्रथम "लोक में जीवात्मा और परमात्मा की समता को समाधि कहा गया है तथा दूसरे "लोक में परमात्मा और आत्मा की अभिन्नता को परम योग कहा गया है। इसका अर्थ यह है कि समाधि ही योग है। वृत्तिनिरोध की 'अवस्था में ही जीवात्मा और परमात्मा की यह समता और दोनो का अविभाग हो सकता है। यह वात नष्टसर्वसंकल्प: पद के द्वारा कही गयी है।

10. हठयोग प्रदीपिका के अनुसार - योग के विषय में हठयोग की मान्यता का विशेष महत्व है, वहां कहा गया है कि-

सलिबे सैन्धवं यद्वत साम्यं भजति योगत:।

तयात्ममनसोरैक्यं समाधिरभी धीयते।। (4/5) ह0 प्र0

अर्थात् जिस प्रकार नमक जल में मिलकर जल की समानता को प्राप्त हो जाता है ; उसी प्रकार जब मन वृत्तिशून्य होकर आत्मा के साथ ऐक्य को प्राप्त कर लेता है तो मन की उस अवस्था का नाम समाधि है। यदि हम विचार करे तो यहां भी पूर्वोक्त परिभाषा से कोई अन्तर दृष्टिगत नही होता। आत्मा और मन की एकता भी समाधि का फल है। उसका लक्षण नही है। इसी प्रकार मन और आत्मा की एकता योग नही अपितु योग का फल है।

पतंजलि योगसूत्र में योग की परिभाषा

अन्य ग्रन्थों की भांति योग सूत्र क्योंकि योग पर ही आधारित है, अत: वह प्रारम्भ में ही योग को परिभाषित करता है। समाधि पाद में योग की परिभाषा कुछ इस प्रकार बतायी गई है-

योगष्चित्तवृत्ति निरोध: ।। (पातंजल योग सूत्र, 1/2)

योग, चित्त वृत्तियों का निरुद्ध होना है। अर्थात् योग उस अवस्था विषेश का नाम है, जिसमें चित्त में चल रही सभी वृत्तियां रूक जाती हैं। यदि हम और अधिक जानने का प्रयास करें तो व्यास-भाष्य मे हमें स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि योग समाधि है। इस प्रकार जब चित्त की सम्पूर्ण वृत्तियां विभिन्न अभ्यासों के माध्यम से रोक दी जाती है, तो वह अवस्था समाधि या योग कहलाती है। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है, कि योग को परिभाषित करने के लिए युज् धातु के कौन से अर्थ का प्रयोग किया गया है। जैसा कि आपने पहले देखा, युज् धातु तीन अर्थों में प्रयुक्त होती है। यहाँ युज् धातु समाधि अर्थ में प्रयोग हो रही है। अत: योग की परिभाषा के लिए यहां युज् समाधौ वाला प्रयोग ठीक है।

हमारा चित्त तरह-तरह की वस्तुओं, दृश्यों, स्मृतियों, कल्पनाओं आदि में हमेशा उलझा रहता है। इन दृश्यों, स्मृतियों, कल्पनाओं, वस्तुओं आदि को वृत्ति भी कहा जा सकता है। यहाँ पर आपको समझाने के लिए केवल इतना बताना चाहते हैं कि जब हमारा चित्त इन सभी वृत्तियों से बाहर आ जाता है, या जब चित्त में किसी भी प्रकार की हलचल नहीं होती तब वही स्थिति योग कहलाती है। इसमें बहुत से स्तर आते हैं। इन स्तरों को योग में विभिन्न उपलब्धियों के माध्यम से समझा जा सकता है। अंतिम उपलब्धि जिसमें की चित्त में कोई भी हलचल न हो, वह एक शान्त सरोवर की भांति हो, ऐसी स्थिति को चित्त का समाधि में होना कहलाता है। यही स्थिति योग भी है क्योंकि ऊपर हम बता आए हैं कि योग को ही समाधि कहा गया है। यहां ध्यान देने की बात यह है कि योग को समाधि पातंजल योग में कहा गया है। अन्य ग्रन्थों में योग की परिभाषा उन ग्रन्थों के अनुसार अलग हो सकती है।

अत: सारांश में हम यह कह सकते हैं कि पातंजल योग सूत्र में योग, चित्त की सम्पूर्ण वृत्तियों का निरोध है या चित्त का बिलकुल शान्त हो जाना है जो समाधि की अवस्था भी कहलाती है।

योग के उद्देश्य

1. मानसिक शक्ति का विकास करना।
2. रचनात्मकता का विकास करना।

3. तनावों से मुक्ति पाना।
4. प्रकृति विरोधी जीवनशैली में सुधार करना।
5. वृहत-दृष्टिकोण का विकास करना।
6. मानसिक शान्ति प्राप्त करना।
7. उत्तम शारीरिक क्षमता का विकास करना।
8. शारीरिक रोगों से मुक्ति पाना।
9. मदिरापान तथा मादक द्रव्य व्यसन से मुक्ति पाना।
10. मनुष्य का दिव्य रूपान्तरण।

योग के प्रकार

योग के कितने प्रकार हैं, योग कितने प्रकार के होते हैं भारतीय योग शास्त्रियों ने योग को 8 प्रकार का बतलाया है-

1. हठयोग
2. लययोग
3. राजयोग
4. भक्तियोग
5. ज्ञानयोग
6. कर्मयोग
7. जपयोग
8. अष्टांगयोग

1. हठयोग

प्राचीन समय में हठयोग में सिद्ध महात्मा घेरण्ड हुए हैं। इन्होंने अपने शिष्य चण्डकपालि को क्रियात्मक रुप से समझाने के लिए घेरण्ड संहिता पुस्तक की रचना की जो आज भी उपलब्ध है। यह हठयोग

का एक प्रामाणिक एवं सर्वमान्य ग्रन्थ है। इसमें हठयोग के सात अंगों षट्कर्म आसन, मुद्रा, प्रत्याहार, प्राणायाम, ध्यान और समाधि का वर्णन है ।

हठयोग में शारीरिक क्रियाओं का समावेश है शरीर को शट्चक्र भेदन के लिए उपयुक्त करने के लिए गौरक्षनाथ जी ने कई मुद्राओं पर बल दिया है जैसे काकी मुद्रा (जिव्हा को कौऐ की चोंच के समान कर प्राण वायु पान करना) खेचरी मुद्रा (जीभ को जिव्हामूल की ओर पलटकर वायुपान करना) उसके बाद चौरासी आसनों का निष्पन्न करना। मूलबन्ध, उड्डीयान बन्ध जालन्धर बन्ध लगाना आदि ।

2. लययोग

योग के आचार्यों ने लय को भी ईश्वर प्राप्ति का एक साधन माना है इसका अर्थ है- ''मन को आत्मा में लय कर देना, लीन कर देना।''

''आनंद त: पष्यन्ति विद्वांसस्तेन लयेन पष्यन्ति।''

''वे विद्वान पुरुष उसे आनन्द (आत्मा) स्वरुप देखते हुए उनमें लय हो जाते हैं और फिर उससे भिन्न उन्हें कुछ भी नहीं दिखाई देता '' इस प्रकार ज्ञान द्वारा सत्य की खोज करते करते मनुष्य आत्मा तक पहुँच जाता है और वह देखता है कि केवल यह मेरा मन ही नहीं, सभी लोक लोकान्तर उसी में लीन हैं। यह आत्मा ही परमात्मा है दोनों में कोई भेद नहीं, यही लय योग है।

3. राजयोग

''राजत्वात् सर्वयोगानां राजयोग इति स्मृत:'' ।

स्मृतियों में ऐसा कहा गया है कि सभी योग साधनों में श्रेष्ठ होने के कारण तथा सभी योग प्रक्रियाओं का राजा होने के कारण इसे राजयोग कहा गया है।''राजयोग का ध्यान ब्रह्म ध्यान, समाधि को निर्विकल्प समाधि तथा राजयोग में सिद्धमहात्मा, जीवनमुक्त कहलाता है राजयोग के सम्बन्ध में सर्वाधिक प्रमाणित ग्रन्थ महर्षि पतंजलि द्वारा रचित योगदर्शन है। ऐसा कहा जाता है कि चित्त की चंचलता को दूर

कर, योग एवं सिद्धयोग का अवधारणात्मक पहलू मन को एकाग्र तथा बुद्धि को स्थिर करके जीवात्मा को परमात्मा में विलीन करने की जो साधना है वह स्वयं ब्रह्मा ने वेदों के द्वारा ऋषियों की बताई।

कुछ योगशास्त्र ने राजयोग को सोलह कलाओं से पूर्ण माना है अर्थात् 16 अंग माने हैं। सात ज्ञान की भूमिकाएं, दो प्रकार की धारणा - प्रकृति धारणा और ब्रह्मधारणा, तीन प्रकार का ध्यान - विराट ध्यान, ईष ध्यान और ब्रह्मध्यान, तथा चार प्रकार की समाधि - दो सविचार और दो निर्विचार अर्थात् वितर्कानुगत, विचारनुगत, आनन्दानुगत और अस्मितानुगत। इस क्रम से साधनाकरता हुआ राजयोगी अपने स्वरूप को प्राप्त करके इसी जीवन में मुक्त हो जाता है ।

4. भक्ति योग

निष्काम कर्म अर्थात कर्म करते हुए कर्मफल की आकांक्षा नहीं रखते हैं। भक्ति मार्ग का पालन करने से साधक को ईश्वर की अनुभूतिस्वयं होने लगती है। गीता में कहा है-

''पत्रं पुष्प फलं तोयंयो में भक्तया प्रयच्छति ''

''अर्थात पत्र, पुष्प, फल, जल इत्यादि को कोई भक्त मेरे लिए प्रेम से अर्पण कर देता है उसे मैं अत्यन्त खुशी से स्वीकार करता हूँ।''

5. ज्ञानयोग

संसार में ज्ञान से बढ़कर कुछ भी पवित्र नहीं है। गीता-'' नहि ज्ञानेन सदृषंपवित्रमिह विद्यते''दो प्रकार का ज्ञान होते है - तार्किक ज्ञान- आध्यात्मिक ज्ञान-तार्किक ज्ञान को विज्ञान कहा जाता है यह वस्तु के आभास में सत्यता के निरुपद के लिए किया जाता है इसमें ज्ञाता और ज्ञेय का ज्ञान रहता है।-आध्यात्मिक ज्ञान को ''ज्ञान'' कहा जाता है इसमें ज्ञाता और ज्ञेय का भेद मिट जाता है ऐसा व्यक्ति सब रूपों में ईश्वर देखता है।

6. कर्मयोग

यज्ञार्था कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धन:गीता-तक्ष्थ कर्म कौन्तेय मुक्तासंग: समाचार:।।

योग एवं सिद्धयोग का अवधारणात्मक पहलू यह संसार कर्म की श्रृंखला से बंधा हुआ है इसलिए हे अर्जुन तू कर्म कर। स्वंययज्ञ की उत्पति कर्म से होती है खेतों में अन्न कर्म से ही पैदा होता है अर्जुन तू अनासक्तहोकर कर्म कर क्योंकि योगी लोग आत्म शुद्धि के लिए कर्म करते हैं। प्रकृति के गुणों द्वारा विवश होकर हर एक को कर्म करने पड़ते हैं। कर्मों के फल से छुट्टी पाये बिना मुक्तिनहीं।

7. जप योग

जप एक दिव्य शक्ति का एक मंत्र या नाम है। स्वामी शिवानंद के अनुसार जप योग एक महत्वपूर्ण अंग है जप इस कलयुग व्यवहार में अकेले शाश्वत शांति परमानंद व अमरता दे सकता है। जप अभ्यस्त हो जाना चाहिये और सात्विक भाव, पवित्रता, प्रेम और श्रद्धा के साथ लिया जाना चाहिये। जप योग से बड़ा कोई योग नहीं है। यह आपको सभी (जो आप चाहते हैं) सत् सिद्धी, भक्ति वमुिक्त प्रदान कर सकता है।

8. अष्टांग योग

महर्षि पतंजलि ने पातंजल योग दर्शन, "अथयोग अनुषासनम्" शब्द से प्रारम्भ किया है इससे स्पष्ट है कि उन्होंने जीवन के आदर्शों में अनुशासन को कितना महत्व दिया है। पंतजलि योग विकास, आठ क्रमों में होता है इसलिए इसे अष्टांग योग भी कहते हैं । अष्टांग योग के अंतर्गत आठ अंग बताये गये हैं।

1. यम
2. नियम
3. आसन
4. प्राणायाम

5. प्रत्याहार
6. धारणा
7. ध्यान
8. समाधि

उपरोक्त आठ अंगों का अभ्यास करने से पूर्व व्यक्तियों को षट्कर्म करना अतिआवश्यक होता है षट्कर्म निम्न प्रकार से बताये गये हैं –

1. नेति
2. नौलि
3. धौति
4. वस्ति
5. कपाल भाति
6. त्राटक

योगासन के नियम

योगासन के लिए कुछ नियम है जिनको ध्यान में रखकर योगाभ्यास किया जाता है तो इसमें बहुत ही शीघ्र सफलता प्राप्त होती है।

1- समय

आसन प्रातः सायं दोनों समय कर सकते हैं। यदि दोनों समय नहीं कर सकते तो प्रातः काल का समय अति उत्तम है। प्रातः काल मन शांत रहता है। शौच आदि से निवृत्त होकर खाली पेट तथा दोपहर के भोजन के लगभग 5 घंटे बाद सायंकाल आसन कर सकते हैं।आसन करने से पहले सौच आदि से निवृत होना चाहिए। यदि कब्ज रहता है, तो प्रातः काल तांबे और चांदी के बर्तन में रखे हुए पानी को पीना

चाहिए। उसके पश्चात थोड़ा सा टहलने से पेट साफ हो जाता है। अधिक कब्ज हो तो त्रिफला का चूर्ण गर्म पानी के साथ रात्रि में सोते समय ले।

2- स्थान

स्वच्छ शांत एवं एकांत स्थान आसन के लिए उत्तम है ।यदि वृक्षों के हरियाली के समीप बाग, तालाब या नदी का किनारा हो तो और भी उत्तम है। खुले वातावरण एवं वृक्षों के नजदीक ऑक्सीजन की पर्याप्त मात्रा मिलती है। जो स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होती है। यदि घर में आसन- प्राणायाम करें तो घी का दीपक या गूगल आदि जलाकर उस स्थान को सुगंधित करना चाहिए।

3- वेशभूषा

आसन करते समय शरीर पर वस्त्र कम व सुविधाजनक होने चाहिए ।पुरुष हाफ पैंट और बनियान का उपयोग कर सकते हैं। माताएं सलवार ब्लाउज आदि पहनकर योगासन एवं प्राणायाम आदि का अभ्यास कर शकती है।

4- आसन व मात्रा

भूमि पर बिछाने के लिए मुलायम दरी या कंबल का प्रयोग करना उचित होता है। खुली जमीन पर आसन न करें। अपने सामर्थ्य के अनुसार व्यायाम करना चाहिए। आसनों का पूर्ण अभ्यास 1 घंटे में ,मध्यम अभ्यास आधा घंटे में, तथा संक्षिप्त अभ्यास 15 मिनट में होता है। आधा घंटा तो प्रत्येक व्यक्ति को योगासन करना ही चाहिए।

5- आयु

मन एकाग्र कर प्रसन्नता एवं उत्साह के साथ अपनी शारीरिक शक्ति और क्षमता का पूरा ध्यान रखते हुए यथाशक्ति अभ्यास करना चाहिए। तभी वह योग से वास्तविक लाभ उठा सकेगा। वृद्ध एवं दुर्बल व्यक्तियों को आसन एवं प्राणायाम अल्प मात्रा में करना चाहिए। 10 वर्ष से अधिक आयु के बालक सभी योगिक अभ्यास कर सकते हैं। गर्भवती महिलाएं कठिन आसन आदि न करें। वह केवल धीरे-धीरे दीर्घ स्वसन प्रणव नाद एवं पवित्र मंत्रों का ध्यान करें।

6- अवस्था एवं सावधानियां

सभी अवस्थाओं में आसन व प्राणायाम किये जा सकते हैं। इन क्रियाओं से स्वस्थ व्यक्ति का स्वास्थ्य उत्तम बनता है। वह रोगी नहीं होता, और रोगी व्यक्ति स्वस्थ होता है। परंतु फिर भी कुछ ऐसे आसन हैं। जिनको रोगी व्यक्ति को नहीं करना चाहिए। तथा जिनका कान बहता हो, नेत्रों में लाली हो, स्नायु एवं हृदय दुर्बल हो, उनको शीर्षासन नहीं करना चाहिए।

हृदय दुर्बल वाले को अधिक भारी आसन जैसे पूर्ण शलभासन, धनुरासन आदि नहीं करना चाहिए। अंड वृद्धि वालों को भी यह आसन नहीं करनी चाहिए। जिनसे नाभि के नीचे वाले हिस्से पर अधिक दबाव पड़े। उच्च रक्तचाप वाले रोगियों को सिर के बल किए जाने वाले शीर्षासन आदि तथा महिलाओं को रितु काल में चार-पांच दिन आसनों का अभ्यास नहीं करना चाहिए। जिनको कमर और गर्दन में दर्द रहता हो वह आगे झुकने वाले आसन न करें।

7- भोजन

भोजन योगासन के लगभग आधे घंटे पश्चात करना चाहिए। भोजन में सात्विक पदार्थों तले हुए गरिष्ठ पदार्थों का सेवन से जठर विकृत हो जाता है। आसन के बाद चाय नहीं पीनी चाहिए ।एक बार चाय पीने से यकृत आदि कोमल ग्रंथियों को लगभग 50 सेल्स निष्क्रिय हो जाते हैं।

इससे आप स्वयं अनुमान कर सकते हैं, कि चाय में कितनी हानि है ।यह भी स्वास्थ्य की एक भयंकर शत्रु है। जो शरीर रूपी पावन मंदिर को विकृत कर देती है। इसमें एक प्रकार का नशा भी होता है। जिसका व्यक्ति अभ्यस्त हो जाता है। जठराग्नि को मंद करने एवं अम्ल पित्त ,गैस, कब्ज आदि रोगों को उत्पन्न करने में चाय का सबसे अधिक योगदान होता है। यकृत को विकृत करने में भी चाय और अंग्रेजी दवा दोनों की महत्वपूर्ण भूमिका है।

8- श्वास- प्रश्वास का नियम

योगासन करते समय सामान्य नियम है। कि आगे की ओर झुकते समय श्वास बाहर निकालते हैं, तथा पीछे की ओर झुकते समय श्वास अंदर भरकर रखते हैं। स्वास नासिका से ही लेना वा छोड़ना चाहिए। मुख से नहीं, क्योंकि नाक से लिया हुआ स्वास फिल्टर होकर अंदर जाता है।

9- द्रष्टि

आंखें बंद करके योगासन करने से मन की एकाग्रता बढ़ती है। जिससे मानसिक तनाव एवं चंचलता दूर होती है। सामान्यता आसन एवं प्राणायाम आंखें खोल कर भी कर सकते हैं।

10- क्रम

कुछ योगासन एवं पार्श्व करने होते हैं, यदि कोई आसन दाईं करवट करें ,तो उसे बाई करवट भी करें। इसके अतिरिक्त आसनों का एक ऐसा क्रम निश्चित कर लें, कि प्रत्येक अनुवर्ती आसन से विघटित दिशा में भी पेशियों और संधियों का व्यायाम हो जाए।

उदाहरण तया सर्वांगासन के उपरांत मत्स्यासन ,मंडूकासन के बाद उष्ट्रासन किया जाए। नवाभ्यासी में शुरू में दो-चार दिन मांसपेशियों और संधियों में पीड़ा का अनुभव करेंगे। अभ्यास जारी रखें पीड़ा शांत हो जाएगी।लेटी अवस्था में किये गए आसनों के बाद जब भी उठा जाय, बाई करवट की ओर झुकते हुए उठना चाहिए।अभ्यास के अंत में शवासन 8 से 10 मिनट

अवश्य करें ताकि अंग प्रत्यंग शिथिल हो जाए।

11- विश्राम

आसन करते समय जब जब थकान का अनुभव हो तब शवासन या मकरासन में विश्राम करना चाहिए। थक जाने के बीच में भी विश्राम कर सकते हैं।

12- यम नियम

योगाभ्यास करने वाले लोगों को यम, नियम का पालन पूरी तरह से करना चाहिए। बिना एवं नियमों के पालन के कोई भी व्यक्ति योगी नहीं हो सकता है।

13- शरीर का तापमान

शरीर का तापमान अधिक उष्ण होने पर या ज्वर होने की स्थिति में योगाभ्यास करने से तापमान बढ़ जाए तो चंद्र स्वर यानी बाई नासिका से श्वास अंदर खींचकर को रखकर सूर्य स्वर यानी दाईं नासिका से रेचक श्वास बाहर निकालना करने की विधि बार- बार करके तापमान सामान्य कर लेना चाहिए।

14- पेट की सफाई

पेट की सफाई और उचित आहार-विहार करना बहुत ही आवश्यक है।

15- कठिन आसन

जिन व्यक्तियों को कभी अस्थि भंग हुआ है। जैसे जिनकी हड्डियां कभी टूटी हुई है ।वह कठिन आसनों का अभ्यास न करें। अन्यथा उसी स्थान पर दोबारा हड्डी टूट सकती है।

16- पसीना आने पर

योगा आसन के अभ्यास के दौरान पसीना आ जाए तो किसी कपड़े से पोछ लेना चाहिए। इससे चुस्ती फुर्ती आ जाती है ।चर्म स्वस्थ रहता है रोगाणु चर्म मार्ग से शरीर में प्रवेश नहीं कर सकेंगे। योग आसन का अभ्यास यथासंभव स्नान आदि से निवृत होकर करना चाहिए। अभ्यास के 15:20 मिनट बाद भी शरीर का तापमान सामान्य होने पर स्नान कर सकते हैं।

योग के उद्देश्य (Objective of Yoga)

1. मानसिक शक्ति का विकास करना।
2. रचनात्मकता का विकास करना।
3. तनावों से मुक्ति पाना।
4. प्रकृति विरोधी जीवनशैली में सुधार करना।
5. वृहत-दृष्टिकोण का विकास करना।
6. मानसिक शान्ति प्राप्त करना।
7. उत्तम शारीरिक क्षमता का विकास करना।
8. शारीरिक रोगों से मुक्ति पाना।
9. मदिरापान तथा मादक द्रव्य व्यसन से मुक्ति पाना।
10. मनुष्य का दिव्य रूपान्तरण।

योग के प्रकार (Types of Yoga)

योग के कितने प्रकार हैं, योग कितने प्रकार के होते हैं भारतीय योग शास्त्रियों ने योग को 8 प्रकार का बतलाया है-

1. हठयोग
2. लययोग
3. राजयोग
4. भक्तियोग
5. ज्ञानयोग
6. कर्मयोग
7. जपयोग
8. अष्टांगयोग

1. हठयोग क्या है?

प्राचीन समय में हठयोग में सिद्ध महात्मा घेरण्ड हुए हैं। इन्होंने अपने शिष्य चण्डकपालि को क्रियात्मक रुप से समझाने के लिए घेरण्ड संहिता पुस्तक की रचना की जो आज भी उपलब्ध है। यह हठयोग का एक प्रामाणिक एवं सर्वमान्य ग्रन्थ है। इसमें हठयोग के सात अंगों षट्कर्म आसन, मुद्रा, प्रत्याहार, प्राणायाम, ध्यान और समाधि का वर्णन है ।

हठयोग में शारीरिक क्रियाओं का समावेश है शरीर को शट्चक्र भेदन के लिए उपयुक्त करने के लिए गौरक्षनाथ जी ने कई मुद्राओं पर बल दिया है जैसे काकी मुद्रा (जिव्हा को कौऐ की चोंच के समान कर प्राण वायु पान करना) खेचरी मुद्रा (जीभ को जिव्हामूल की ओर पलटकर वायुपान करना) उसके बाद चौरासी आसनों का निष्पन्न करना। मूलबन्ध, उड्डीयान बन्ध जालन्धर बन्ध लगाना आदि ।

2. लययोग क्या है?

योग के आचार्यों ने लय को भी ईश्वर प्राप्ति का एक साधन माना है इसका अर्थ है- "मन को आत्मा में लय कर देना, लीन कर देना।"

''आनंद त: पष्यन्ति विद्वांसस्तेन लयेन पष्यन्ति।''

"वे विद्वान पुरुष उसे आनन्द (आत्मा) स्वरुप देखते हुए उनमें लय हो जाते हैं और फिर उससे भिन्न उन्हें कुछ भी नहीं दिखाई देता " इस प्रकार ज्ञान द्वारा सत्य की खोज करते करते मनुष्य आत्मा तक पहुँच जाता है और वह देखता है कि केवल यह मेरा मन ही नहीं, सभी लोक लोकान्तर उसी में लीन हैं। यह आत्मा ही परमात्मा है दोनों में कोई भेद नहीं, यही लय योग है।

3. राजयोग क्या है?

''राजत्वात् सर्वयोगानां राजयोग इति स्मृत:'' ।

स्मृतियों में ऐसा कहा गया है कि सभी योग साधनों में श्रेष्ठ होने के कारण तथा सभी योग प्रक्रियाओं का राजा होने के कारण इसे राजयोग कहा गया है।"राजयोग का ध्यान ब्रह्म ध्यान, समाधि को निर्विकल्प समाधि तथा राजयोग में सिद्धमहात्मा, जीवनमुक्त कहलाता है राजयोग के सम्बन्ध में सर्वाधिक प्रमाणित ग्रन्थ महर्षि पतंजलि द्वारा रचित योगदर्शन है। ऐसा कहा जाता है कि चित्त की चंचलता को दूर कर, योग एवं सिद्धयोग का अवधारणात्मक पहलू मन को एकाग्र तथा बुद्धि को स्थिर करके जीवात्मा को परमात्मा में विलीन करने की जो साधना है वह स्वयं ब्रह्मा ने वेदों के द्वारा ऋषियों की बताई।

कुछ योगशास्त्र ने राजयोग को सोलह कलाओं से पूर्ण माना है अर्थात् 16 अंग माने हैं। सात ज्ञान की भूमिकाएं, दो प्रकार की धारणा – प्रकृति धारणा और ब्रह्मधारणा, तीन प्रकार का ध्यान – विराट ध्यान, ईष ध्यान और ब्रह्मध्यान, तथा चार प्रकार की समाधि – दो सविचार और दो निर्विचार अर्थात् वितर्कानुगत, विचारनुगत, आनन्दानुगत और अस्मितानुगत। इस क्रम से साधनाकरता हुआ राजयोगी अपने स्वरूप को प्राप्त करके इसी जीवन में मुक्त हो जाता है ।

4. भक्ति योग क्या है?

निष्काम कर्म अर्थात कर्म करते हुए कर्मफल की आकांक्षा नहीं रखते हैं। भक्ति मार्ग का पालन करने से साधक को ईश्वर की अनुभूतिस्वयं होने लगती है। गीता में कहा है-

''पत्रं पुष्प फलं तोयंयो में भक्तया प्रयच्छति''

'अर्थात पत्र, पुष्प, फल, जल इत्यादि को कोई भक्त मेरे लिए प्रेम से अर्पण कर देता है उसे मैं अत्यन्त खुशी से स्वीकार करता हूँ।''

5. ज्ञानयोग क्या है?

संसार में ज्ञान से बढ़कर कुछ भी पवित्र नहीं है।

गीता के अनुसार-'' ***नहि ज्ञानेन सदृषंपवित्रमिह विद्यते''***

दो प्रकार का ज्ञान होते है –

तार्किक ज्ञान- तार्किक ज्ञान को विज्ञान कहा जाता है यह वस्तु के आभास में सत्यता के निरुपद के लिए किया जाता है इसमें ज्ञाता और ज्ञेय का ज्ञान रहता है।-

आध्यात्मिक ज्ञान -आध्यात्मिक ज्ञान को ''ज्ञान'' कहा जाता है इसमें ज्ञाता और ज्ञेय का भेद मिट जाता है ऐसा व्यक्ति सब रूपों में ईश्वर देखता है।

6. कर्मयोग क्या है?

यज्ञार्था कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धन:गीता-तक्ष्थ कर्म कौन्तेय मुक्तासंग: समाचार:।।

योग एवं सिद्धयोग का अवधारणात्मक पहलू यह संसार कर्म की श्रृंखला से बंधा हुआ है। स्वंययज्ञ की उत्पति कर्म से होती है खेतों में अन्न कर्म से ही पैदा होता है क्योंकि योगी लोग आत्म शुद्धि के लिए कर्म करते हैं। प्रकृति के गुणों द्वारा विवश होकर हर एक को कर्म करने पड़ते हैं। कर्मों के फल से छुट्टी पाये बिना मुक्ति नहीं।

7. जप योग क्या है?

जप एक दिव्य शक्ति का एक मंत्र या नाम है। स्वामी शिवानंद के अनुसार जप योग एक महत्वपूर्ण अंग है जप इस कलयुग व्यवहार में अकेले शाश्वत शांति परमानंद व अमरता दे सकता है। जप अभ्यस्त हो जाना चाहिये और सात्विक भाव, पवित्रता, प्रेम और श्रद्धा के साथ लिया जाना चाहिये। जप योग से बड़ा कोई योग नहीं है। यह आपको सभी (जो आप चाहते हैं) सत् सिद्धी, भक्ति वमुिक्त प्रदान कर सकता है।

8. अष्टांग योग क्या है?

महर्षि पतंजलि ने पातंजल योग दर्शन, "अथयोग अनुषासनम्" शब्द से प्रारम्भ किया है इससे स्पष्ट है कि उन्होंने जीवन के आदर्शों में अनुशासन को कितना महत्व दिया है। पंतजलि योग विकास, आठ क्रमों में होता है इसलिए इसे अष्टांग योग भी कहते हैं। अष्टांग योग के अंतर्गत आठ अंग बताये गये हैं।

1. यम
2. नियम
3. आसन
4. प्राणायाम
5. प्रत्याहार
6. धारणा
7. ध्यान
8. समाधि

उपरोक्त आठ अंगों का अभ्यास करने से पूर्व व्यक्तियों को षट्कर्म करना अतिआवश्यक होता है षट्कर्म निम्न प्रकार से बताये गये हैं –

1. नेति

2. नौलि
3. धौति
4. वस्ति
5. कपाल भाति
6. त्राटक

योग का महत्व (Importance of Yoga)

शारीरक रूप में

- शारीरिक स्वच्छता हेतु
- रोगो से बचाव
- शरीर को सौंदर्य बनाने हेतु
- शरीर की सही मुद्रा हेतु
- मांसपेशियों को विकसित करने के लिए
- हृदय व फेफडों की कार्यक्षमता बढाने में
- लचक विकसित में सहायक

सामाजिक रूप में

- सामाजिक गुणों को विकसित करने में सहायक
- सामाजिक रिश्ते विकसित करने में

मानसिक रूप में

- तनाव से मुक्ति
- तनाव रहित जीवन
- एकाग्रता बढ़ाने में सहायक
- याददास्त बढ़ाने में सहायक

- सहनशक्ति बढ़ाने में सहायक

अध्यात्मिक रूप में

- अध्यात्मिक गुणों का विकास
- ध्यान बढ़ाने में सहायक
- नैतिक गुणों को विकसित करने में सहायक

षट्कर्म क्या है

षट्कर्म शब्द दो शब्दों 'षट्'और 'कर्म' से मिलकर बना है। 'षट्'का अर्थ है छह और 'कर्म' का अर्थ है कार्य। आयुर्वेद में 'कर्म'का अर्थ होता है शोधन जिसे आयुर्वेदिक पद्धति में पंचकर्म चिकित्सा कहते हैं। षट्कर्म में शुद्धिकरण क्रियाएं शरीर को भीतर से स्वच्छ एवं साफ करने और योग साधक को उच्च योग क्रियाएं करने के लिए तैयार करने हेतु बनाई गई हैं। षट्कर्म शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य दोनों के लिए एक उम्दा योगाभ्यास है।

हठप्रदीपिका में 6 षट्कर्म का उल्लेख आता है। ये हैं:

धौति

वस्ति

नेति

त्राटक

नौली

कपालभाति

आधुनिक चिकित्सा में षट्कर्म

आज कल षट्कर्म या शुद्धि क्रिया योग में चिकित्सा समुदाय की बहुत रुचि जगी है। आधुनिक चिकित्साशास्त्रियों द्वारा किए गए विभिन्न अध्ययनों से यह बात साबित हो गया है कि विभिन्न रोगों की

रोकथाम में षट्कर्म के लाभ होने की बात स्वीकार की है। षट्कर्म क्रियाएं शरीर से विषैले पदार्थ को निकालने में, शरीर की विभिन्न प्रणालियों को सशक्त करने में, उनकी कार्यक्षमता बढ़ाने में तथा व्यक्ति को विभिन्न रोगों से मुक्त रखने में बड़ी भूमिका निभाती है, इसलिए आरोग्य योगशाला में योग कक्षा के दौरान समय समय पर यह क्रिया कराए जाते हैं।

षट्कर्म के फायदे

षट्कर्म के बहुत सारे लाभ हैं। इसके कुछ महत्वपूर्ण फायदे का यहां जिक्र किया जा रहा है;--

षट्कर्म या शोधन योग क्रिया एक ऐसी योगाभ्यास है जो शरीर को शुद्ध करने के में अहम् भूमिका निभाती है।

हठयोग के अनुसार शुद्धि क्रिया योग शरीर में एकत्र हुए विकारों, अशुद्धियों एवं विषैले तत्वों को दूर कर शरीर को भीतर से स्वच्छ करती है।

उच्चतर योग साधना की दिशा में यह एक पहला चरण है।

शुद्धिकरण योग शरीर, मस्तिष्क एवं चेतना पर पूर्ण नियंत्रण का भास देता है।

शोधन क्रियाएं स्वच्छ करने की क्रियाओं और तकनीकों की बात करता है, जिनसे शरीर भीतर से स्वच्छ होता है।

ये प्रक्रियाएं मनुष्य को प्रत्येक स्तर पर शक्तिशाली एवं व्यापक रूप रोगों से दूर रखता है। रोगों, विकारों तथा अशुद्धियों को शरीर से दूर करने के लिए पूरे शरीर के पूर्ण शुद्धिकरण की प्रक्रिया आवश्यक है। जहाँ षट्कर्म अहम भूमिका निभाता है।

जब शरीर में अत्यधिक विकार हो अथवा शरीर में वात, पित्त तथा कफ का असंतुलन हो तो प्राणायाम और योगासन से पूर्व षट्कर्म करना चाहिए।

प्राणायाम साधना आरंभ करने से पूर्व सबसे पहले नाड़ी शुद्ध होनी चाहिए जो षट्कर्म दुआरा करनी चाहिए।

जब शरीर शुद्ध होगा तो रासायनिक घटकों का अनुपात संतुलित रहेगा। इससे मस्तिष्क के कामकाज पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा और शरीर तथा मस्तिष्क को स्वस्थ रखने में सहायता मिलेगी।

शुद्धि करण से मस्तिष्क को शांत रखने एवं बेचैनी, सुस्ती, नकारात्मक विचारों तथा भावनाओं को दूर करने में सहायता मिलती है। जब मस्तिष्क शांत एवं सतर्क होता है तो जागरुकता का स्तर सरलता से बढ़ाया जा सकता है।

षट्कर्म तनाव से लड़ने एवं स्वास्थ्य सुधारने में सहायता करते हैं। वे विश्राम प्रदान कर तनाव कम करते हैं।

षट्कर्म की छह प्रमुख क्रियाओं में धौति (कुंजल एवं वस्त्रधौति) क्रिया संपूर्ण पाचन का शोधन करती है और साथ ही साथ यह अतिरिक्त पित्त, कफ, विष को दूर करती है तथा शरीर के प्राकृतिक संतुलन को वापस लाती है।

वस्ति, शंखप्रक्षालन तथा मूलशोधन से आंतें पूरी तरह स्वच्छ हो जाती हैं, पुराना मल एवं कृमि दूर हो जाते हैं, पाचन विकारों का उपचार होता है।

नियमित रूप से नेति क्रिया करने पर कान, नासिका एवं कंठ क्षेत्र से गंदगी निकालने की प्रणाली ठीक से काम करती है तथा यह सर्दी एवं कफ, एलर्जिक राइनिटिस, ज्वर, टॉन्सिलाइटिस आदि दूर करने में सहायक होती है। इससे अवसाद, माइग्रेन, मिर्गी एवं उन्माद में यह लाभदायक होती है।

नौली क्रिया उदर की पेशियों, तंत्रिकाओं, आंतों, प्रजनन, उत्सर्जन एवं मूत्र संबंधी अंगों को ठीक करती है। अपच, अम्लता, वायु विकार, अवसाद एवं भावनात्मक समस्याओं से ग्रस्त व्यक्ति के लिए लाभदायक है।

त्राटक नेत्रों की पेशियों, एकाग्रता तथा मेमोरी के लिए लाभप्रद होती है। इसका सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव मस्तिष्क पर होता है।

कपालभाति बीमारियों से दूर रखने के लिए रामबाण माना जाता है। यह बलगम, पित्त एवं जल जनित रोगों को नष्ट करती है। यह सिर का शोधन करती है और फेफड़ों एवं कोशिकाओं से सामान्य श्वसन क्रिया की तुलना में अधिक कार्बन डाईऑक्साइड निकालती है। कहा जाता है कि कपालभाति प्रायः हर रोगों का इलाज है।

षट्कर्मों की उपयोगिता- Utility of the body cleansing process

मानव स्वास्थ्य की दृष्टि से षटकर्मों की अत्यधिक उपयोगिता है। षट्कर्मों के द्वारा शरीर के मलों व विषाक्त तत्वों को दूर किया जाता है। षट्कर्म शरीर की चपापचय क्रिया को नियन्त्रित व सुव्यवस्थित करते हैं। षटकर्मों की क्रियायें शरीर का कायाकल्प कर उसे रोगमुक्त, दीर्घायु व स्वस्थ करती हैं। हठयोग में वर्णित षट्कर्मो के अभ्यास से दीर्घकाल तक युवावस्था को बनाया रखा जा सकता है। इनके अभ्यास से नाक, कान, आँख, गले, फेफड़े, आमाशय व पूरी आहार नाल से सम्बन्धित रोगों को तो प्रत्यक्ष रूप से ही ठीक किया जा सकता है, लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से ये समस्त शरीर को प्रभावित करते हैं तथा शरीर को निरोगी बनाते हैं। हठयोग के ग्रन्थों में इनकी उपयोगिता बताते हुए कहा गया है कि षट्कर्मो के अभ्यास से कफ, वात व पित्त रोग, कुष्ठ रोग, प्लीहा, यकृत फेफड़ों तथा उदर के रोग दूर होते हैं।

यहाँ यह कहा जा सकता है कि शरीर को स्वस्थ रखने के लिए तो औषधियों का प्रयोग भी किया जा सकता है। फिर इन कठिन षटकर्मों का ही अभ्यास क्यों किया जाये अथवा जब योग साधना में भी केवल प्राणायाम को ही सर्वरोगों का नाशक बताया है तो फिर उसी का अभ्यास क्यों न किया जाये चिन्तन करने पर ये दोनों शंकायें निराधार प्रतीत होती है। प्रथम शंका के सम्बन्ध में जब औषधियों पर विचार करते हैं तो ज्ञात होता है कि भले ही चिकित्सा पद्धतियों में उपयोगी से उपयोगी औषधियों की खोज कर ली गयी हो किन्तु फिर भी वे शरीर को पूर्ण स्वस्थ रखने में समर्थ नहीं है। अधिकतर औषधियाँ रोगों की चिकित्सा नही करती बल्कि उनका शमन करती हैं। रोग कुछ समय के लिए शान्त हो जाता है और पुनः तीव्रवेग के साथ उपस्थित हो जाता है। अधिकतर औषधियों में यह कमी है कि एक रोग को दूर करती हैं तो दूसरी ओर अन्य कई रोगों को उत्पन्न कर देती है। इनके विपरीत यदि षटकर्मों का अभ्यास किया जाये तो वे शरीर को पूर्ण आरोग्य प्रदान करते

हैं। ये शरीर से मलों का निष्कासन कर देते हैं और कोई अन्य विकार उत्पन्न नहीं होने देते। शरीर से मर्लों की निवृत्ति होते ही आरोग्य प्राप्त हो जाता है।

दूसरी शंका कि जब प्राणायाम सब रोगों को समाप्त कर देता है तो फिर षटकर्मों का अभ्यास क्यों किया जाये। तो इस पर चिन्तन करने से ज्ञात होता है कि यह कथन सही है कि प्राणायाम सर्वरोगों का नाशक है। किन्तु जितना समय प्राणायाम के द्वारा रोगों को दूर करने में लगता है। उससे बहुत कम समय में षट्कर्मो के द्वारा रोगों को दूर किया जा सकता है। यदि केवल प्राणायाम का ही अभ्यास किया जाये तो रोग कठिनता से दूर होते हैं, जबकि प्राणायाम से पूर्व षटकर्मो का अभ्यास किया जाए तो रोग आसानी से और शीघ्रता के साथ दूर हो जाते हैं। इसीलिए हठयोग के ग्रन्थों में षटकर्मों को प्राणायाम से पूर्व करने का विधान किया गया है।

अगर हम उपनिषदों व वेदों का अवलोकन करें तो उपनिषदों व वेदों में कहा गया है 'जीवेम: शरदः शतम' अर्थात हम सौ वर्ष तक जीवित रहें। यह केवल एक विचारधारा ही नहीं, अपितु व्यावहारिक सत्य है। मनुष्य का शरीर यदि विकार रहित रहे तो यह सौ वर्षों से भी अधिक जीवित रह सकता है। भारतीय इतिहास में ऐसे अनेक पुरुष हुए हैं, जिन्होंने कई सौ वर्षों का आरोग्य पूर्ण व सुखपूर्वक जीवन जिया है।

हमारे शरीर के तीनों दोष वात, पित्त व कफ शरीर के आधार स्तम्भ है। यदि ये तीनों समान अवस्था में बने रहें तो शरीर स्वस्थ व निरोग बना रहता है। इसके विपरीत इनकी विषम अवस्था होने पर शरीर में विभिन्न रोग उत्पन्न हो जाते हैं। **आयुर्वेद में वात के कुपित होने से 80 प्रकार के रोग, पित्त के कुपित होने से 40 प्रकार के रोग** व **कफ के कुपित होने से 20 प्रकार के रोगों** का उत्पन्न होना माना गया है। इन सभी प्रकार के रोगों को दूर करने के लिए आयुर्वेद में स्नेहन, स्वेदन, वमन, विरेचन व वस्ति ये पंच कर्म बताए गए हैं। उसी प्रकार योग में षटकर्मों का विधान किया गया है।

षट्कर्मों के द्वारा जहाँ शरीर स्वस्थ, निरोग व ओजस्वी बनता है, वहीं दूसरी ओर मन

में शान्ति व स्फूर्ति आती है तथा बुद्धि भी निर्मल व तीक्ष्ण हो जाती है। वर्तमान समय में विभिन्न शोध संस्थानों ने यह स्पष्ट किया है कि शोधन क्रिया (षटकर्म) शरीर व मन दोनों से सम्बन्धित रोगों के उपचार में एक अचूक एवं दिव्य रयासन का कार्य करते हैं। षटकर्म जहाँ शरीर के आन्तरिक स्थूल अंगों की शुद्धि करते हैं, वहीं इन्द्रियों, मन व बुद्धि जैसे सूक्ष्म करणों को भी मल रहित कर शान्ति प्रदान करते हैं।

इस आधार पर हम देखते हैं कि आन्तरिक शुद्धि, आरोग्यता तथा सम्पूर्ण स्वास्थ्य के लिए षटकर्मों की उपयोगिता सिद्ध होती है, वहीं दूसरी ओर षटकर्म मन व बुद्धि को भी एकाग्र व शान्त

करते है और जिज्ञासु साधक के लिए मोक्ष तक का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

षटकर्मों के फल का वर्णन करते हुए हठयोग प्रदीपिका में कहा गया है-

षटकर्मनिर्गतस्थॉल्यकफ दोषमलादिक:।

प्राणायामं ततः कुर्यादनायासेन सिद्धयति।। (हठयोगप्रदीपिका -2/37)

अर्थात षटकर्मों के अभ्यास से साधक के शरीर की स्थूलता दूर हो जाती है तथा बीस प्रकार के कफ दोष, दूषित वात, पित्त आदि मल दूर हो जाते हैं जिससे प्राणायाम आदि करने में शीघ्र सफलता मिलती है। इस प्रकार हठयोग में षट्कर्मों का बहुत अधिक महत्व प्रतिपादित किया गया है और सामान्यतः षटकर्म का महत्वपूर्ण फल शुद्धिकरण है और जब शरीर का शुद्धिकरण होता है तब शरीर में कोई विकार नहीं रहते।

प्राणायाम -प्राणायाम की परिभाषा, भेद और महत्व

प्राणायाम शब्द संस्कृत व्याकरण के दो शब्दों 'प्राण' और 'आयाम' से मिलकर बना है। संस्कृत में प्राण शब्द की व्युत्पत्ति 'प्र' उपसर्गपूर्वक 'अन्' धातु से हुई है। 'अन' धातु जीवनीशक्ति का वाचक है। इस प्रकार 'प्राण' शब्द का अर्थ चेतना शक्ति होता है। 'आयाम' शब्द का अर्थ है- नियमन करना। इस प्रकार बाह्य श्वांस के नियमन द्वारा प्राण को वश में करने की जो विधि है, प्राण पर नियंत्रण तथा सूक्ष्म और लंबे समय तक साँस लेने में क्षमता ग्रहण करने हेतु श्वास-लेने संबंधी खास तकनीके उसे प्राणायाम कहते हैं।

प्राणायाम का अर्थ

प्राणायाम दो शब्दों से मिलकर बना है प्राण + आयाम, प्राण का अर्थ होता है जीवनी शक्ति, अयाम के दो अर्थ है, पहला नियंत्रण करना या रोकना तथा दूसरा लम्बा या विस्तार करना। अपनी देह के जीवन की अवस्था का नाम प्राण है और उस अवस्था के अवरोध को अयाम कहते है। इसका अभिप्राय यह है कि जीवन की अवस्था के अवरोध का नाम प्राणायाम हैं। महर्षि पतंजलि ने प्राणायाम को परिभाषित कर कहा है।

तस्मित् सति श्वासप्रश्वास योर्गविविच्छेदः प्राणायामः योग सूत्र **2/49**

अर्थात मामले की स्थिरता होने पर श्वास-प्रश्वास की स्वाभाविक गति का नियमन करना, प्राणायाम है, पतंजलि कहते हैं प्राणायाम के अभ्यास से असानता का आवरण क्षीण हो जाता है तथा धारणा की योग्यता आ जाती है।

प्राणायाम की परिभाषा

प्राणायाम से संबंधित विभिन्न व्याख्याकारों ने जो व्याख्या की है वह इस प्रकार है- महर्षि व्यास- आसन जय होने पर श्वास या बाह्य वायु का आचमन तथा प्रश्वास या वायु का नि:सारण, इन दोनों गतियों का जो विच्छेद है अर्थात उभय भाव है, वही प्राणायाम है।

योगी याज्ञवल्क्य के अनुसार- प्राण और अपान वायु के मिलाने को प्राणायाम कहते हैं। प्राणायाम कहने से रेचक, पूरक और कुंभक की क्रिया समझी जाती है।

जाबाल दर्शनोपनिषद के अनुसार- रेचक, पूरक एवं कुम्भक क्रियाओं के द्वारा जो प्राण संयमित किया जाता है, वही प्राणायाम है।

त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद के अनुसार- सभी प्रकार के वृत्तियों के निरोध को प्राणायाम कहा गया है। स्वामी ओमानन्द तीर्थ के अनुसार - बाहर की वायु का नासिका द्वारा अंदर प्रवेश करना श्वास कहलाता है। कोष्ठ स्थित वायु का नासिका द्वारा बाहर निकलना प्रश्वास कहलाता है। श्वास प्रश्वास की गतियों का प्रवाह रेचक, पूरक और कुम्भक द्वारा बाह्याभ्यान्तर दोनों स्थानों पर रोकना प्राणायाम कहलाता है।

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य के अनुसार - प्राणायाम सांस खींचने, उसे अंदर रोके रखने और बाहर निकालने की एक विशेष क्रिया पद्धति है। इस विधान के अनुसार, प्राण को शरीर में संचित किया जाता है।

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार - प्राणायाम क्या है ? शरीर स्थित जीवनीशक्ति को वश में लाना। प्राण पर अधिकार प्राप्त करने के लिए हम पहले श्वास-प्रश्वास को संयत करना शुरू करते हैं क्योंकि यही प्राणजय का सबसे सख्त मार्ग है।

स्वामी शिवानन्द के अनुसार- प्राणायाम वह माध्यम है जिसके द्वारा योगी अपने छोटे से शरीर में समस्त ब्रह्माण्ड के जीवन को अनुभव करने का प्रयास करता है तथा सृष्टि की समस्त शक्तियाँ प्राप्त कर पूर्णता का प्रयत्न करता है।

अत: प्राणायाम अर्थात प्राण का आयाम जोड़ने की प्राण तत्व संवर्धन की एक ऐसी प्रक्रिया जिसमें जीवात्मा का क्षुद्र प्राण ब्रह्म चेतना के महाप्राण से जुड़कर उसी के तुल्य बन जाए।

प्राणायाम के भेद

महर्षि पतंजलि ने प्राणायाम के मुख्यत: तीन भेद बताए हैं-

1. बाह्य वृत्ति (रेचक)- प्राणवायु को नासिका द्वारा बाहर निकालकर बाहर ही जितने समय तक सरलतापूर्वक रोका जा सके, उतने समय तक रोके रहना 'बाह्य वृत्ति' प्राणायाम है।

2.आभ्यान्तरवृत्ति (पूरक)- प्राणवायु को अंदर खींचकर अर्थात श्वास लेकर जितने समय आसानी से रूक सके, रोके रहना आभ्यान्तर वृत्ति है, इसका अपर नाम 'पूरक' कहा गया है।

3. स्तम्भ वृत्ति (कुम्भक)- श्वास प्रश्वास दोनों गतियों के अभाव से प्राण को जहाँ-तहाँ रोक देना कुम्भक प्राणायाम है। प्राणवायु सहजतापूर्वक बाहर निष्कासित हुआ हो अर्थात जहाँ भी हो वहीं उसकी गति को सहजता से रोक देना स्तम्भवृत्ति प्राणायाम है।

प्राणायाम के इन तीनों लक्षणों को योगी देश, काल एवं संख्या के द्वारा अवलोकन करता रहता है कि वह किस स्थिति तक पहुँच चुका है। देश, काल व संख्या के अनुसार, ये तीनों प्राणायामों में से प्रत्येक प्राणायाम तीन प्रकार का होता है-

1. देश परिदृष्ट- देश में देखता हुआ अर्थात देश से नापा हुआ है अर्थात प्राणवायु कहाँ तक जाती है। जैसे- (1) रेचक में नासिका तक प्राण निकालना, (2) पूरक में मूलाधार तक श्वास को ले जाना, (3) कुम्भक में नाभिचक्र आदि में एकदम रोक देना।

2. काल परिदृष्ट- समय से देखा हुआ अर्थात समय की विशेष मात्राओं में श्वास का निकालना, अन्दर ले जाना और रोकना। जैसे- दो सेकण्ड में रेचक, एक सेकण्ड में पूरक और चार सेकण्ड में कुम्भक। इसे हठयोग के ग्रंथों में भी माना गया है। हठयोग के ग्रंथों म पूरक, कुम्भक और रेचक का अनुपात 1:4:2 बताया गया हैे◌ं।

3. संख्या परिदृष्ट:- संख्या से उपलक्षित। जैसे- इतनी संख्या में पहला, इतनी संख्या में दूसरा और इतनी संख्या में तीसरा प्राणायाम। इस प्रकार अभ्यास किया हुआ प्राणायाम दीर्घ और सूक्ष्म अर्थात लम्बा और हल्का होता है।

इन तीन प्राणायामों के अतिरिक्त महर्षि पतंजलि ने एक चौथे प्रकार का प्राणायाम भी बताया है-

बाह्याभ्यन्तरविषयाक्षेपी चतुर्थ:।। पांतजल योग सूत्र 2/51

अर्थात अंदर बाहर के विषय को फेंकने वाला चौथा प्राणायाम है। बाह्य आभ्यान्तर प्राणायाम पूर्वक अर्थात इनका पूर्ण अभ्यास होने पर प्राणायाम की अवस्था विशेष पर विजय करने से क्रम से दोनों पूर्वोक्त प्राणायामों की गति का निरोध हो जाता है, तो यह प्राणायाम होता है। यह चतुर्थ प्राणायाम पूर्व वर्णित तीनों प्राणायामों से सर्वथा भिन्न है। सूत्रकार ने यहाँ यही तथ्य प्रदर्शित करने के लिए सूत्र में 'चतुर्थ पद' का प्रयोग किया है। बाह्य एवं अन्त: के विषयों के चिंतन का परित्याग कर देने से अर्थात इस अवधि में प्राण बाहर निष्कासित हो रहे हों अथवा अंदर गमन कर रहे हों अथवा गतिशील हों या स्थिर हों, इस तरह की जानकारी को स्वत: परित्याग करके और मन को अपने इष्ट के ध्यान में विलीन कर देने से देश, काल एवं संख्या के ज्ञान के अभाव में, स्वयमेव प्राणों की गति जिस किसी क्षेत्र में रूक जाती है, वही यह चतुर्थ प्राणायाम है। यह सहज ही आसानी से होने वाला राजयोग का प्राणायाम है। इस प्राणायाम में मन की चंचलता शांत होने के कारण स्वयं ही प्राणों की गति रूक जाती है। यही इस प्राणायाम की विशेषता है।

इसके अतिरिक्त हठयोग के ग्रंथों में प्राणायाम के आठ प्रकार लिते हैं। हठयोग में प्राणायाम को 'कुम्भक' कहा गया है। ये आठ प्रकार के प्राणायाम या कुम्भक हैं-

(i) हठप्रदीपिका के अनुसार- सूर्यभेदन, उज्जायी, सीत्कारी, शीतली, भस्त्रिका, भ्रामरी, मूच्छ्रा तथा प्लाविनी ये आठ प्रकार के कुम्भक हैं।

(ii) घेरण्ड संहिता के अनुसार- केवली, सूर्यभेदी, उज्जायी, शीतली, भस्त्रिका, भ्रामरी, मूच्छ्रा तथा केवली ये आठ कुम्भक हैं।

प्राणायाम का महत्व

प्राण के नियंत्रण से मन भी नियंत्रित होता है क्योंकि प्राण शरीर व मन के बीच की कड़ी है। प्राणायाम से चित्त की शुद्धि होती है और चित्त शुद्ध होने से अनेक तर्कों, जिज्ञासुओं का समाधान स्वयमेव हो जाता है। इन्द्रियों का स्वामी मन है और मन पर अंकुश प्राण का रहता है। इसलिए जितेन्द्रिय बनने वाले को प्राण की साधना करनी चाहिए। इस प्रकार प्राणायाम वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से हम प्राणों का नियमन, नियंत्रण, विस्तार एवं शोधन करते हैं। चित्त शुद्ध होता है और चित्त शुद्ध होने पर ज्ञान प्रकट होता है जो योग साधना का प्रमुख उद्देश्य है।

प्राणायाम के प्राण का विस्तार एवं नियमन होता है और प्राण मानवीय जीवन में विशेष महत्व रखता है। प्राण की महत्ता सर्वविदित है और प्राणायाम प्राण नियंत्रण की प्रक्रिया है। अत: प्राणायाम का योग में महत्वपूर्ण स्थान है।

हठयोग प्रदीपिका में वर्णित प्राणायाम

सूर्यभेद, उज्जायी, सीत्कारी, शीतली, भस्त्रिका, भ्रामरी मूर्च्छा और प्लाविनी ये आठ प्रकार के कुम्भक हैं।

1. नाड़ी शोधन

नाड़ी शोधन प्राणायाम को हठप्रदीपिका के आठ प्राणायामों के अंतर्गत नहीं रखा गया है किन्तु इस प्राणायाम को अन्य 8 प्राणायामों से पूर्व तथा नियमित करने को बताया गया है। इस प्राणायाम को करने से साधकों के नाड़ी समूह तीन मास से कुछ अधिक समय में स्वच्छ एवं निर्मल हो जाते हैं। प्राण का प्रवाह सुषुम्ना नाड़ी में होने लगता है।

इस प्राणायाम को एक दिन में चार बार करना चाहिए (प्रातः, मध्याह्न, सांय तथा अर्धरात्रि) तथा कुम्भकों की संख्या धीरे-धीरे 80 तक करनी चाहिए। कहा भी गया है कि बिना नाड़ी शुद्धि के अन्य 8

प्राणायाम सिद्ध नहीं होते। इसलिए इस प्राणायाम का अभ्यास साधक को नियमित एवं नियम से करना चाहिए।

विधि- नाड़ी शुद्धि की विधि को बताते हुए स्वात्माराम जी ने लिखा है कि- सर्वप्रथम पù◌ासन में बैठे। तत्पश्चात् चन्द्रनाड़ी (बाएंँ नासारन्ध्र) से गहरी लम्बी श्वास लें यथासम्भव कुम्भक (श्वास को रोके) करें तथा सूर्य नाड़ी (दाएँ नासारन्ध्र) से श्वास को धीरे-धीरे बाहर छोड़े। पुनः श्वास को सूर्यनाड़ी से भरें पुनः कुम्भक करें तथा चन्द्रनाड़ी से प्रश्वास करें। इसी प्रक्रिया को धीरे-धीरे दोहराते रहें। विद्वानों ने इसका अभ्यास तीन महीने तक करने का निर्देश दिया है।

लाभ- नाड़ी शोधन जैसा की इसके नाम से ही विधित है- यह प्राणायाम शरीर में स्थित 72000 नाड़ियों का शोधन करता है। इड़ा तथा पिंगला की बीच संतुलन स्थापित करता है जिससे प्राण का प्रवाह सुषुम्ना में होता है। शरीर को निर्मल करता है। शरीर कान्तिवान तथा कृष होता है। इससे जठराग्नि प्रदीप्त होती है, नाद का अनुभव होता है तथा शरीर कभी भी रोग ग्रस्त नहीं होता।

सावधानी-जिन व्यक्तियों को उच्चरक्तचाप, हृदय संबधी विकार हो वो इस प्राणायाम में कुम्भक का अभ्यास न करें। साइटिका, स्लिप डिस्क आदि से पीड़ित व्यक्ति नीचे जमीन पर न बैठें, वे लोग इसका अभ्यास कुर्सी पर या गद्दे में बैठकर करें।

सामान्य व्यक्ति यथासम्भव ही कुम्भक करें परेशानी होने पर कुम्भक को छोड़कर धीरे-धीरे रेचक कर दें। श्वास-प्रश्वास को धीरे-धीरे करें, वेग से न करें। नाड़ी शुद्धि के बाद ही स्वामी स्वात्माराम जी ने आठ प्राणायामों को करने का निर्देश दिया है।

वे आठ प्राणायाम इस प्रकार हैं- सूर्यभेद, उज्जायी, सीत्कारी, शीतली, भस्त्रिका, भ्रामरी मूच्छ्रा और प्लाविनी ये आठ प्रकार के कुम्भक हैं।

2.सूर्यभेदन

सूर्यभेदन हठप्रदीपिका में पहला प्राणायाम है। इस प्राणायाम में बार-बार सूर्यनाड़ी का भेदन किया जाता है इसलिए इसे सूर्यभेदन या सूर्यभेदी कहा जाता है।

विधि- सर्वप्रथम किसी उप्र्युक्त स्थान (समतल) पर आसन बिछा लें, फिर किसी भी ध्यानात्मक आसन जैसे सिद्धासन, पद्मासन आदि लगा ले। कमर तथा गर्दन को सीधा रखते हुए दाएं हाथ से प्राणायाम की प्रणव मुद्रा बना लें तथा बाएं हाथ से ज्ञान या चिन मुद्रा बनाकर उसको दूसरे पैर के घुटने के ऊपर रख लें। तत्पश्चात् दाएं नासारन्ध्र से धीरे-धीरे लम्बा श्वास ले यथासम्भव कुम्भक (जालन्धर बन्ध) लगाएं तथा गर्दन को सीधा कर कुम्भक को खोले और बाएं नासारन्ध्र से धीरे-धीरे प्रश्वास करें। इसी क्रिया को बार-बार दोहराएँ।

लाभ- इस प्राणायाम के नियमित अभ्यास से मस्तक की शुद्धि होती है, सभी प्रकार के वातरोग दूर होते है। पेट में होने वाले कृमि दोष नष्ट हो जाते हैं। सर्दियों में इसे करने से सर्दी नहीं लगती क्योंकि यह शरीर को उष्णता देता है। सावधानी- इस प्राणायाम को ग्रीष्म ऋतु में नहीं करना चाहिए। जिन लोगों को पित्त सम्बन्धी दोष हो एवं नकसीर फटने की समस्या हो उनके लिए यह अभ्यास वर्जित है।

3. उज्जायी विधि

सर्वप्रथम किसी भी ध्यानात्मक आसन में बैठे। कमर, गर्दन को सीधा रखें। दोनों नासारन्ध्रों से कण्ठ को संकुचित करते हुए श्वास ले जिससे धीमे-धीमे आवाज(छोटे बच्चे के खरांटे, लहरों की ध्वनि) उत्पन्न हो तत्पश्चात् यथासम्भव कुम्भक करें फिर प्राणायाम की प्रणव मुद्रा बनाएं तथा बाएं नासारन्ध्र से धीरे-धीरे प्रश्वास करें। इस क्रिया को बार-बार दोहराएं, यहीं उज्जायी प्राणायाम हैं।

लाभ- उज्जायी प्राणायाम के लाभों का वर्णन करते हुए हठप्रदीपिका में लिखा है कि इसका नियमित अभ्यास से सभी प्रकार के कफ सम्बंधी कण्ठदोष नहीं होते। शरीर में स्थित जठराग्नि प्रदीप्त होती है। इससे नाड़ी सम्बन्धी, जलोदर, धातु सम्बन्धी सभी दोष दूर हो जाते हैं। कहा गया है कि इस प्राणायाम को उठते-बैठते हमेशा करना चाहिए।

सावधानी- हृदय से सम्बन्धित किसी रोग या उच्च रक्तचाप वाले रोगियों को इस प्राणायाम में कुम्भक नहीं करना चाहिए। गले को (श्वास नली) अत्यधिक संकुचित न करें।

प्राणायाम का मुख्य उद्देश्य

प्राणायाम का मुख्य उद्देश्य सम्पूर्ण शरीर में प्राणीक ऊर्जा के प्रवाह को नियन्त्रित करना हैं। प्राणायाम के नियमित अभ्यास से शरीर में स्थित समस्त नाड़ियों का शोधन होता है जिससे प्राण का प्रवाह नाड़ियों में सुचारू रूप से होता है जिसके परिणामस्वरूप साधक को भौतिक एवं मानसिक स्थिरता प्राप्त होती हैं। प्राणायाम के अभ्यास से सभी रोगों का नाश होता है साथ ही श्वसन संस्थान पूर्ण रूप से सक्रिय होता है। प्राणायाम के अभ्यास से केवल शारीरिक एवं मानसिक लाभ ही नहीं बल्कि आध्यात्मिक उन्नति भी प्राप्त होती है। इसके अभ्यास से शरीर में सोयी हुयी शक्तियां भी जाग्रत होती हैं।

प्राणायाम से लाभ

प्राणायाम करने से शरीर के कई अंगो पर प्रभाव पड़ता है। प्राणायाम स्वास्थ्य हेतु अति उत्तम माना जाता है। प्राणायाम फेफड़ों को मजबूत बनाता है। श्वास लेते समय जब फेफड़ों का प्रसार होता है तब गुर्दे, उदर, यकृत, तिल्ली, आंतों तथा साथ ही साथ धड की सतह पर रक्त पोषक पदार्थों का समुचित परिसंचरण करता है। प्रतिदिन प्राणायाम करने से शरीर कांतियुक्त हो जाता है। शरीर के अंदर के प्रत्येक अवयव की प्राणायाम के माध्यम से अच्छी तरह से मालिश हो जाती है। शरीर को अधिक मात्रा में

आॅक्सीजन प्राप्त होने लगती है और शिरा एवं धमनियों में जो अवरोध उत्पन्न होता है वह हट जाता है तथा शरीर में रक्त का संचार अधिक सुचारू रूप से होने लगता है।

प्राणायाम के प्रकार

1. नाड़ी शोधन

कहा भी गया है कि बिना नाड़ी शुद्धि के अन्य 8 प्राणायाम सिद्ध नहीं होते। इसलिए इस प्राणायाम का अभ्यास
साधक को नियमित एवं नियम से करना चाहिए। नाड़ी शोधन जैसा की इसके नाम से ही विधित है- यह प्राणायाम शरीर में स्थित 72000 नाडियों का शोधन करता है। इड़ा तथा पिंगला की बीच संतुलन स्थापित करता है जिससे प्राण का प्रवाह सुषुम्ना में होता है। शरीर को निर्मल करता है। शरीर कान्तिवान तथा कृष होता है। इससे जठराग्नि प्रदीप्त होती है, नाद का अनुभव होता है तथा शरीर कभी भी रोग ग्रस्त नहीं होता।

2. सूर्यभेदन

इस प्राणायाम में बार-बार सूर्यनाड़ी का भेदन किया जाता है इसलिए इसे सूर्यभेदन या सूर्यभेदी कहा जाता है। इस प्राणायाम के नियमित अभ्यास से मस्तक की शुद्धि होती है, सभी प्रकार के वातरोग दूर होते है। पेट में होने वाले कृमि दोष नष्ट हो जाते हैं। सर्दियों में इसे करने से सर्दी नहीं लगती क्योंकि यह शरीर को उष्णता देता है।

3. उज्जायी

इसका नियमित अभ्यास से सभी प्रकार के कफ सम्बंधी कण्ठदोष नहीं होते। इससे नाड़ी सम्बन्धी, जलोदर, धातु सम्बन्धी सभी दोष दूर हो जाते हैं। कहा गया है कि इस प्राणायाम को उठते-बैठते हमेशा करना चाहिए।

4. सीत्कारी

इसके अभ्यास से भूख-प्यास संतुलित होती है तथा साधक को निद्रा या सुस्ती नहीं सताती। साधक का अपने शरीर पर पूरा नियंत्रण हो जाता है। इस प्राणायाम के अभ्यास से अम्ल-पित्त आदि की समस्याएं दूर होती है। मुख की दुर्गन्ध एवं पायरिया आदि रोग नहीं होते हैं।

5. भस्त्रिका

इस प्राणायाम के नियमित अभ्यास से बुखार और पित्त सम्बन्धी विकार दूर हो जाते हैं। भूख-प्यास नियंत्रित हो जाती हैं। इससे सभी रोग तथा विष का प्रभाव भी, नष्ट हो जाता है। मुँह के छाले, दुर्गंध, दांतो के रोग दूर हो जाते हैं। वात-पित्त-कफ से होने वाले सभी रोगों का दूर करता है। यह प्राणायाम कुण्डलिनी को जागृत करता है, यह शरीर को ऊष्मा प्रदान करता है।

6. भ्रामरी प्राणायाम

भ्रामरी के अभ्यास से मन शान्त होता है, आनंद का अनुभव होता है। सभी प्रकार के मानसिक रोग दूर होते हैं। क्रोध, चिंता एवं अनिद्रा का निवारण करता है। आवाज को मधुर एवं मजबूत बनाता हैं।

7. मूर्छा

इस प्राणायाम के अभ्यास से अत्यधिक मन को मूर्छा प्रदान करने वाले परमानंद की प्राप्ति होती है। यह स्थिति साधक के लिए बहुत ही आनंदकारी होती है।

8. प्लाविनी

इसका नियमित अभ्यास करने वाला साधक कभी भी जल में नहीं डूबता वह तो जल में कमल के पत्ते के समान तैरता रहता है।

मुद्रा का अर्थ एवं परिभाषा

'मोदन्ते हृष्यन्ति यया सा मुद्रा यन्त्रिता सुवर्णादि धातुमया वा'

अर्थात् जिसके द्वारा सभी व्यक्ति प्रसन्न होते हैं वह मुद्रा है जैसे सुवर्णादि बहुमूल्य धातुएं प्राप्त करके व्यक्ति प्रसन्नता का अनुभव अवश्य करता है।

'मुद हर्ष' धातु में "रक् प्रत्यय लगाकर मुद्रा शब्द की निष्पत्ति होती है जिसका अर्थ प्रसन्नता देने वाली स्थिति है। धन या रुपये के अर्थ में "मुद्रा' शब्द का प्रयोग भी इसी आशय से किया गया है। कोष में मुद्रा' शब्द के अनेक अर्थ मिलते हैं। जैसे मोहर, छाप, अंगूठी, चिन्ह, पदक, रुपया, रहस्य, अंगों की विशिष्ट स्थिति (हाथ या मुख की मुद्रा)] नृत्य की मुद्रा (स्थिति) आदि।

यौगिक सन्दर्भ में मुद्रा शब्द को 'रहस्य' तथा "अंगों की विशिष्ट स्थिति' के अर्थ में लिया जा सकता है। कुण्डलिनी शक्ति को जागृत करने के लिए जिस विधि का प्रयोग किया जाता है, वह रहस्यमयी ही है। व गोपनीय होने के कारण सार्वजनिक नहीं की जाने वाली विधि है। अतः रहस्य अर्थ उचित है। आसन व प्राणायाम के साथ बंधों का प्रयोग करके विशिष्ट स्थिति में बैठकर 'मुद्रा' का अभ्यास किया जाता है। इसलिए इसे अंगों की स्थिति विशेष के रूप में भी लिया जाता है। और इनमें हाथों तथा मुख की विशेष स्थिति को भी सम्मिलित किया जा सकता है। उदाहरणार्थ जानुशिरासन में बैठकर प्राणायाम तथा बन्धों का प्रयोग करके महामुद्रा का अभ्यास किया जाता है तथा प्राणायाम के अभ्यास के लिए हाथ की विशेष मुद्रा बनाकर नासारन्ध्रों पर ले जानी होती है। अतः उक्त 'रहस्य' तथा "अंगों की विशिष्ट स्थिति' अर्थ उचित है। "मुद्रा' अत्यन्त बहुमूल्य साधन हैं जो कुण्डलिनी शक्ति का जागरण करके साधक को लक्ष्य तक पहुँचाती है। अतः 'सुवर्ण या धन या रुपया' का भाव भी इसमें

निहित है। इसकी बहुमूल्यता निःसन्देह सिद्ध होती है। उपर्युक्त अर्थ के आलोक में मुद्रा की परिभाषा निम्न प्रकार से दी जा सकती है-

- आन्ततरिक भावों को व्यक्त करने की विधा मुद्रा कहलाती है।

- आसन, प्राणायाम की सम्मिलित विशिष्ट स्थिति जिसके द्वारा कुण्डलिनी शक्ति का जागरण सम्भव है, मुद्रा कहलाती है।

- आनन्द की प्राप्ति कराने वाली प्रक्रिया मुद्रा है।

- चित्त को प्रकट करने वाले विशेष भाव मुद्रा है।

- मुद्रा आसन की वह विशेष स्थिति जिसमें प्राणायाम सम्मिलित हो या नहीं हो परन्तु जो कुण्डलिनी जागरण में मदद करें वह मुद्रा है।

केवल आसन अथवा केवल प्राणायाम की अपेक्षा यह सम्मिलित अभ्यास शीघ्र फलदायक है। मुद्राओं के अभ्यास से साधक सूक्ष्म शरीर और प्राण शक्ति को नियंत्रित कर लेता है जिससे उसकी वृत्तियाँ अन्तर्मुखी हो जाती है तथा साधना में सफलता प्राप्त होती है। साधक अपने प्राणमय और मनोमय कोष को स्वच्छ व निर्मल बना लेता है जिससे चित्त एकाग्र हो जाता है तथा कुण्डलिनी जागरण व समाधि की स्थिति अनायास प्राप्त हो जाती है।

बंध का अर्थ एवं परिभाषा

बन्ध-बन्धने धातु में घञ प्रत्यय करके बन्ध शब्द बनता है जिसका अर्थ है. बांधना या नियन्त्रित करना। जिस प्रक्रिया के द्वारा शरीर के विभिन्न आन्तरिक अवयवों को बांधकर अथवा नियंत्रित करके साधना में प्रवृति होती है, वह क्रिया बंध कहलाती है। कोषकार अनेक अर्थ करते हैं।

जैसे बांधना, कसना, जकड़ना, व्यवस्थित करना, रोकना, हस्तक्षेप करना आदि किन्तु यहाँ पर जिन बन्धों की चर्चा अपेक्षित है, वे शरीर को नियंत्रित करके साधना के मार्ग को प्रशस्त करते हैं। बन्ध को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है-

किसी अंग विशेष को बांधकर संवेदनाओं को लक्ष्य विशेष की ओर भेजना बन्ध है।

योग के दृष्टिकोण से बन्ध का प्रयोग प्राणायाम के समय आवश्यक है। इसके द्वारा प्राण को नियंत्रित किया जाता है जिससे यह अनिश्चित जगह न जा सके। जहाँ प्राण पहुँचेगा, उसी अंग पर उसका प्रभाव पड़ेगा। अतः बन्ध का प्रयोग करके प्राण को नियंत्रित करके इच्छित स्थान पर उसको ले जाना संभव हो जाता है। कहा जा सकता है कि शरीर के अंगों को संकुचित करके प्राण को नियंत्रित करने के लिए वृत्तियों को अन्तर्मुखी करने की प्रक्रिया का नाम बन्ध है जिससे आन्तरिक अंग व स्नायु स्वस्थ तथा क्रियाशील होते हैं।

बंध व मुद्रा का उद्देश्य

मुद्राओं व बन्धों का कार्य साधक को साधना पथ पर अग्रसर करना है इन मुद्राओं व बन्धों के प्रयोग से कुण्डलिनी शक्ति जागृत होती है जो हठयोगी की साधना का मुख्य उद्देश्य है। इसके अतिरिक्त आन्तरिक अवयवों को नियंत्रित करके साधक की अन्तःस्रावी तथा बहि:स्रावी ग्रन्थियों को प्रभावित करता है जिनके स्राव से शारीरिक व मानसिक स्थिति सुदृढ़ होती है। मुद्रा के अभ्यास में 'स्थिरता' की बात स्वयं घेरण्ड संहिता में की गई है '**मुद्रया स्थिरता चैव**'। स्नायु संस्थान को वशीभूत करके इच्छित ऊर्जा का उत्पादन एवं प्रयोग करके स्थिरता का भाव प्राप्त किया जा सकता है। यह मुद्रा का भाव साधक को अपने गुणों के सदृश ही ढाल लेता है और वह मुद्रा के प्रभाव से प्रभावित होकर साधना पथ पर अग्रसर हो जाता है। इन मुद्राओं के अभ्यास से तंत्रिका तंत्र के द्वारा मस्तिष्क को भेजे जाने वाले संदेश चेतना को जागृत करने में सफल हो जाते हैं।

बन्ध का प्रयोग तंत्रिकाओं को प्रभावित करता है। गले, उदर अथवा गुदाद्वार पर जो तंत्रिकाएँ कार्यरत हैं, उन्हें सक्रिय करके अवरोध उत्पन्न कर दिया जाए तो प्राण के लिए ऊर्ध्व, अधो या मध्य मार्ग बंद हो जाएंगे और प्राण का सुषुम्ना में गमन होने लगेगा। इस प्रकार बन्ध कुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत करने तथा प्राण पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं।

मुद्राएँ व बन्ध साधक की बाह्यवृत्ति को समाप्त कर अन्तःवृत्ति को जाग्रत करते हैं, जिससे वह संसार की ओर से विमुख होकर साधना पथ पर बढता रहे। इनके अभ्यास से वीतराग होकर साधक लक्ष्य प्राप्ति के प्रति सजग हो जाता है। ऐसा एकाग्रचित साधक साधकों की श्रेणी में सम्मान का अधिकारी होता है।

स्वामी कुवलयानन्द जी के अनुसार 'मुद्रा तथा बन्ध हठयोग की खास विशेषताएँ है। ये अनेक तंत्रिकापेशीय बन्ध लगाकर किए जाते हैं। इनमें आन्तरिक दबाव से बहुत बड़ी सीमा तक परिवर्तन होते हैं तथा अनेक ग्रंथिस्रावों तथा अन्तःस्रावी ग्रंथियों तथा कुछ तंत्रिका समूहों को भी प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। इस प्रकार के यौगिक व्यायाम से पेशाब तथा पाखाने की मात्रा कम हो जाती है (क्षयो मूत्र पुरीषयोः)। खास तौर से मूल तथा उड्डीयान बन्ध के अभ्यास द्वारा जोकि अभ्यासी की योग्यतानुसार विभिन्न प्रकार के उपवातावरणीय दबाव वक्ष तथा पेट गुहा में पैदा करते हैं। स्वामी निरंजनानन्द की मान्यता है कि "योग शास्त्र में जिन मुद्राओं और बन्धों का वर्णन किया गया है वे तन्त्रिका तंत्र की संवेदनाओं और उत्तेजनाओं को शांत एवं संयत करने में सहायक सिद्ध होती हैं। कुण्डलिनी योग या क्रिया योग में जिन मुद्राओं का अभ्यास किया जाता है जैसे अश्विनी मुद्रा, वज्रोली मुद्रा, तड़ागी मुद्रा इत्यादि, उनका प्रभाव प्राणमय कोश पर पड़ता है और वे प्राण के प्रवाह को परिवर्तित करने का प्रयास करती है। उनका प्रभाव मस्तिष्क पर भी पड़ता है और वे चित्त के

भीतर भाव विशेष को जाग्रत करने में सहायक होती हैं ताकि हम अन्तर्मुखी हो सकें। बन्धों एवं मुद्राओं का अभ्यास एकाग्रता प्राप्ति में सहायक होता है।

घेरण्ड संहिता के अनुसार बन्ध के अभ्यास वास्तव में स्नायविक अवरोध हैं तथा शरीर और मस्तिष्क के भीतर जितनी भी तन्त्र तंत्रिकाएँ है, उनमें उत्पन्न हो रही संवेदनाओं को अवरुद्ध कर देते हैं और दूसरे प्रकार की संवेदनाओं को जाग्रत करते हैं। आन्तरिक अंगों में जहाँ भी संकुचन की क्रिया होती है, चाहे गर्दन में हो, चाहे कण्ठ में हो, चाहे जननेन्द्रिय के क्षेत्र में हो या गुदाद्वार के क्षेत्र में हो, वह आन्तरिक अंगों से सम्बन्धित प्रक्रियाओं को बदल देती है, संवेगों को बदल देती है। शरीर को एक अन्य प्रकार की उत्तेजनात्मक या शान्त अवस्था में ले जाती है, जिसके कारण आन्तरिक स्थिरता का आभास होता है।'

अतः स्पष्ट होता है कि बन्ध व मुद्राएँ हमें बाह्य या भौतिक जगत् से हटाकर अन्तर्जगत् में ले जाती है। अन्नमय, प्राणमय व मनोमय कोश पर विजय प्राप्त करने के बाद ही विज्ञानमय कोश में पहुँचने की स्थिति होती है। आसन, प्राणामय, बन्ध व मुद्रा के माध्यम से अन्नमय, प्राणमय व मनोमय कोश पर नियंत्रण किया जाना सम्भव है। अतः लक्ष्य की प्राप्ति हेतु मुद्राओं की उपयोगिता निःसन्देह सिद्ध होती है। कहा गया है-

तस्मात् सर्वप्रयत्नेन प्रबोधयितुमीश्वरीम्।

बहाद्वारमुखे सुसां मुद्राभ्यासं समाचरेत्।। ह-प्र. 3/5

अर्थात् ब्रह्मदार (मूलस्थान) पर सोती हुई कुण्डलिनी शक्ति को जगाने के लिए सब प्रयत्न करके मुद्राओं का अभ्यास करना चाहिए क्योंकि मुद्राएँ ही कुण्डलिनी को जगाने के लिए एकमात्र सर्वोत्तम उपाय है। इससे मुद्रा के अभ्यास की उपयोगिता सिद्ध होती है।

बंध प्रकार लाभ तथा सावधानियाँ

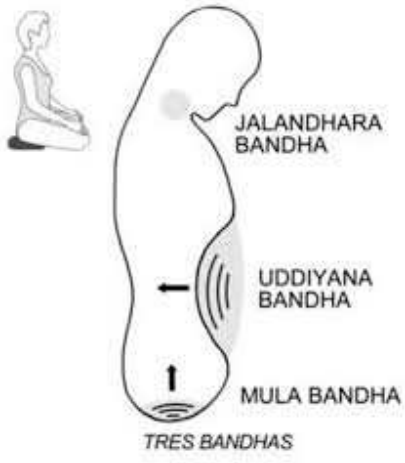

बंध का अर्थ है रोकना या बंद करना। बंध लगाने तथा मुद्राओं का अभ्यास करने से विशेष लाभ होता है। मुद्राओं का जिक्र हम अपने पहले के आर्टिकल में कर चुके हैं ।आज हम प्राणायाम के दौरान बंध लगाने का विस्तार से वर्णन कर रहे हैं।

प्राणायाम के दौरान एक विशेष प्रकार से बंध लगाया जाता है जिसका सीधा संबंध हमारे स्वास्थय से होता है। प्राणायाम करते समय अपनी श्वासों के प्रवाह को कुछ क्षणों के लिए रोक दिया जाना ही बंध लगाने को दर्शाता है। बंध लगाने के लिए हमें विशेष अभ्यास की ज़रूरत होती है। हमारे शरीर में बहने वाली ऊर्जा को बंध लगाकर किसी विशेष क्षेत्र में कुछ क्षणों के लिए रोक दिया जाता है तथा जब बंध खोला जाता है तो वही ऊर्जा अधिक वेग से हमारे शरीर में प्रवाहित होने लगती है। इसका सीधा प्रभाव हमारे शरीर पर पड़ता है। इससे शरीर के किसी भी क्षेत्र में जमीं गंदगी को वहाँ से बहाकर ले जाना बंध के द्वारा ही संभव है। यह वही प्रक्रिया है जिससे हमारे रक्त संचार में विशेष सुधार होता है और जो हमारे स्वास्थय को सुधारने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। इसे हम एक उदाहरण से कुछ इस प्रकार समझ सकते हैं कि जिस प्रकार किसी पाइप लाइन में अगर गंदगी या कचरा हो जाए तो उस पाइप लाइन को साफ करने के लिए प्रेशर से पानी डाला जाता है जिससे कि वह नाली या

पाइपलाइन आसानी से खुल जाती है। उसी प्रकार हमारे शरीर में भी नसों का जाल बना हुआ है तथा एक जगह से दूसरी जगह तक रक्त का प्रवाह लगातार होता रहता है । हमारे गलत खान पान के कारण और हवा में फैल रहे प्रदूषण के कारण से हमारे शरीर में भी टॉक्सिन्स जमा हो जाते हैं जो कि हमारे शरीर में विभिन्न तरह की समस्याओं को जन्म देते है। प्राणायाम के दौरान लगाने जाने वाले बंध के अभ्यास से हम अपने शरीर से टॉक्सिन्स को आसानी से बाहर निकाल सकते हैं। प्राणायाम के दौरान बंध लगाने से तथा कुछ क्षणों के बाद बंध खोलने से जहाँ हमारे शरीर से टॉक्सिन्स दूर होकर हमारा शरीर साफ होता है वहीं दूसरी ओर हमारे शरीर के रक्त संचार की प्रक्रिया में भी सुधार होता है। पुराने मृत कण बहकर दूर चले जाते हैं। इस प्रकार सभी अंग मजबूत बनते हैं। बंध लगाने से हमारे मस्तिष्क , नसों और नाड़ियों को मजबूती मिलती है।

यह तो आप समझ ही चुके होंगे कि प्राणायाम करने से हमारे स्वास्थय पर काफी अच्छा प्रभाव पड़ता है । अब समझने की बात यह है कि प्राणायाम करते समय तीन कौन सी क्रियाऐं की जाती हैं जिन्हें समझकर हम बंध लगाने की प्रकिया को आसानी से समझ सकते हैं––

1.पूरक–– नियंत्रित गति से श्वास अंदर लेने की प्रक्रिया को पूरक कहते हैं। श्वास को अंदर लेते समय एक लय और सही अनुपात का होना बहुत ही आवश्यक है। इसे हठयोग में अभ्यांतर वृत्ति भी कहा जाता है।

2.कुम्भक––हर व्यक्ति में श्वास रोकने की अलग क्षमता होती है। अत: कोई व्यक्ति कम समय तक और कोई अधिक समय तक श्वास रोक सकता है । इसी अंदर ली हुई श्वास को रोकने की क्रिया को कुम्भक कहते हैं। इसे हठयोग में स्तम्भ वृत्ति भी कहते हैं ।

3.रेचक–––यह प्राणायाम की तीसरी तथा आखिरी क्रिया है अर्थात इस क्रिया में अंदर ली हुई तथा रोकी गई श्वास को विधिपूर्वक बाहर निकाला जाता है । श्वास बाहर निकालने की इसी प्रक्रिया को ही रेचक कहा जाता है तथा हठयोग में इसे बाह्य वृत्ति भी कहते हैं।

मुख्यत:बंध चार प्रकार के होते हैं ——-

1.मूल बंध (गुदा संबंधी रोक या बंध लगाना)

2.उड्डियान बंध (आँतों व पेट को दबाकर पीठ तक चिपकाकर बंध लगाना)

3.जालंधर बंध (ठोड्डी को छाती से लगाकर बंध लगाना)

4.महाबंध (एक ही साथ तीनों बंधों का अभ्यास करना)

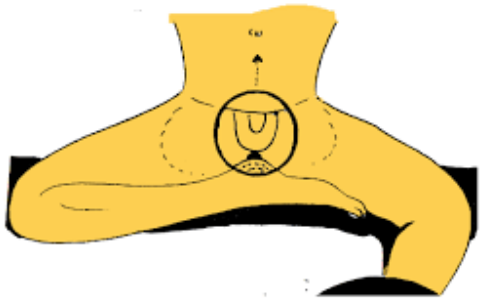

1.मूल बंध——– इस बंध का अभ्यास सिद्धासन में बैठकर करना सबसे उचित रहता है। पहला तरीका है इसे करने के लिए सर्वप्रथम हम सिद्धासन में बैठ जाऐं तथा फिर मलमूत्र के छिद्रभाग के मध्य स्थान पर एक एड़ी से हल्का दबाव बनाऐं। इसके साथ ही अपनी गुदा को सिकोड़ते हुए अपनी मूत्रेन्द्रिय की नाड़ियों को ऊपर की ओर खींचें।

इस बंध को लगाने का दूसरा तरीका है कि सबसे पहले कपड़ा बिछाकर धरती पर बैठ जाऐं तथा अब एक पैर को आगे की ओर लंबा कर दें । अब दूसरे पैर को मोड़कर उसकी एड़ी का हल्का दबाव अपने मलमूत्र मार्ग के छिद्र के मध्य भाग पर बनाऐं । ध्यान रहे कि दबाव हल्का ही हो अन्यथा उस स्थान की नसों को नुकसान पहुँच सकता है। अब दबाव डालने के साथ-साथ गुदा को ऊपर की ओर

खींचना चाहिए।अब इसके साथ-साथ श्वास को भी ऊपर खींचना चाहिए। प्रारम्भ में यह प्रक्रिया 5 से 10 बार तथा धीरे-धीरे इसे बढ़ाकर 20 बार तक भी किया जा सकता है।

लाभ———-

1.इस बंध का नियमित अभ्यास करने से वीर्य संबंधी रोग नहीं होते।

2. भयानक से भयानक कब्ज से भी छुटकारा मिलता है।

3.इसके निरन्तर अभ्यास से बवासीर की समस्या भी जल्द ही ठीक हो जाती है।

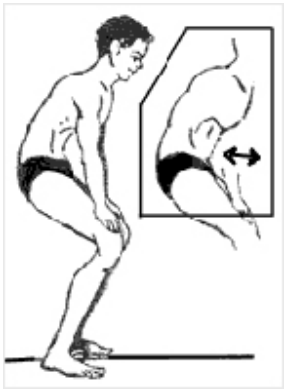

2.उड्डियान बंध————- इस बंध को लगाने के लिए सुखासन में या पद्मासन में बैठ जाऐं । अब दोनों हाथों की हथेलियों को घुटनों पर रखें तथा अब थोड़ा आगे की ओर झुकें । अब साँस को पूरी तरह बाहर की ओर निकाल कर पेट को अंदर की ओर जितना हो सके खींचें तथा पीठ के साथ चिपका दें । जब तक संभव हो अर्थात यथा शक्ति इस स्थिति में बने रहें ।फिर पेट को ढीला छोड़ते हुए साँस भर लें ।पहले यह प्रक्रिया 5 से 8 बार तक करें तथा बाद में अभ्यास को नियमित करते हुए से बढ़ाकर 15 से 20 बार तक कर सकते हैं।

सावधानियाँ——1.यदि पेट में कोई घाव हो या पेट का कोई ऑपरेशन हुआ हो तो इस बंध का अभ्यास कदापि ना करें ।

2.हर्निया ,हाइपर एसिडिटी, हृदय रोग तथा उच्चरक्त चाप व कमर दर्द की समस्या होने पर भी इस बंध का अभ्यास ना करें।

लाभ——

1. यह शारीरिक शक्ति को बढ़ाता है तथा आयु में वृद्धि करता है।

2. शरीर को हृष्ट-पुष्ट भी बनाता है तथा स्फुर्ति प्रदान करता है।

3.आँतों व पेट को बल देता है ।

4.इस बंध के प्रयोग से पेट की अतिरिक्त चर्बी घटती है ।

5.यह बंद कब्ज़ ,एसिडिटी की समस्या तथा पेट के अन्य रोगों में विशेष लाभ पहुंचाता है ।

6. इसके अभ्यास से गैस की समस्या समाप्त होती है।

7.यह किडनी की समस्याओं में भी विशेष लाभ पहुँचाता है।

8.इसके निरन्तर अभ्यास मे मूत्रदोषों का निपटारा होता है तथा बार-बार पेशाब आने की समस्या से छुटकारा मिलता है।

3.जालंधर बंध——किसी भी सुखासन में बैठकर पूरक करके कुम्भक करें अर्थात् एक लय के साथ साँस को अंदर खींचकर बाहर छोड़ें तथा अब सिर और गर्दन को इतना झुकाऐं कि ठोड्डी की हड्डी छाती के भाग को स्पर्श करे।इस बंध के प्रभाव से हमारे सिर,दिल ,दिमाग,मेरूदंड तता गर्दन की माँसपेशियों पर काफी गहरा प्रभाव पड़ता है। हमारा दिमाग ही हमारे सभी अंगों को संदेश पहुँचाने का काम करता है अत: इस बंध के प्रभाव से हमारे मस्तिष्क में फैली हुई नाड़ियों के जाल में रक्त का संचार सुचारू रूप से होता है। जब हमारे मस्तिष्क में रक्त का प्रवाह सही गति से होता है तो वह हमारे शरीर को सही समय पर सही निर्देश देने लगता है जिसके फलस्वरूप हमारे अन्य अंग भी सही प्रकार से कार्य करने लगते हैं और हम स्वस्थ हो जाते हैं।

सावधानियाँ——– यदि गले में कोई तकलीफ हो या गले में दर्द हो तो इस बंध का अभ्यास नहीं करना चाहिए। सर्दी जुकाम होने पर भी इसे ना करें ।इस बंध का अभ्यास बलपूर्वक और जबरदस्ती ना करें ।

4.महाबंध——जैसेकि महाबंध के नाम से ही स्पष्ट हो जाता है कि यह एक महाबंध है यानि कि बड़ा बंध। अर्थात् जब मूल बंध, उड्डियान बंध और जालंधर बंध तीनो को एक साथ लगाया जाता है तो महाबंध बनता है। दूसरे तरीके से कहा जाए तो जब सिद्धासन में बैठकर बाऐं पैर की एड़ी को मलमूत्र के छिद्र के मध्य भाग में हल्का दबाव दिया जाए तथा साथ ही गुदा को ऊपर की ओर खींचा जाए इसे मूल बंध कहा जाता है और श्वास को भी धीरे-धीरे ऊपर की ओर खींचा जाए और इसके साथ पेट को अंदर की ओर खींचा जाए तथा पीठ से चिपका दिया जाए। इसे उड्डियान बंध कहा जाता है। इसको करने के साथ-साथ अपने सिर और गर्दन को इस प्रकार से झुकाया जाए ताकि हमारी ठोड्डी हमारी छाती को छू सके इस अवस्था तो जालंधर बंध कहा जाता है। फिर इसी अवस्था में अपनी क्षमता के अनुसार कुछ क्षणों के लिए रुका जाए तो इस स्थिति को महाबंध कहा जाता है। फिर धीरे-धीरे एक सही लयबद्ध अनुपात में दोबारा सामान्य स्थिति में आया जाए। इस प्रक्रिया को हम अपने अभ्यास के माध्यम से धीरे-धीरे बढ़ा सकते हैं।

लाभ——महाबंध का अभ्यास करने से शरीर में फैली नाड़ियों में कहीं पर भी अवरोध होने पर या कोई टॉक्सिन इकट्ठा होने की स्थिति में विशेष लाभ होता है अर्थात् शरीर टॉक्सिन से मुक्त होकर स्वस्थ होता है। शरीर में रक्त का प्रवाह सुचारू रूप से होने लगता है। इसके नियमित अभ्यास से भूख बढ़ती है तथा शरीर की पाचन शक्ति में सुधार होता है। अत: अच्छे स्वास्थय के लिए प्राणायाम करते समय बंध लगाने

को लेकर लय और अनुपात का ध्यान रखना चाहिए।जिससे हम प्राणायाम करते समय लगाए हुए बंधों से पूर्ण लाभ उठा सकें।

शीतली प्राणायाम करने का तरीका और फायदा

शीतली प्राणायाम (Sheetali Pranayam) जिसे कूलिंग ब्रिद भी कहा जाता है। शीतली प्राणायाम गर्मियों के मौसम में की जाने वाली क्रिया व प्राणायाम है। गर्मी में इस प्राणायाम को करने से इसके काफी फायदे मिलते हैं। एक्सपर्ट बताते हैं कि जिसका शरीर पर बहुत ज्यादा गर्म हो जाता है, गर्मी के समय में बहुत ज्यादा गर्मी का एहसास होता है, तो वो इस योग क्रिया को कर शरीर को ठंडा कर सकते हैं। शीतली प्राणायाम को करने के लिए मुंह को खोलकर और श्वास को अंदर लेकर जाना होता है। शीतली प्रायाणाम को करने के दौरान सावधानियों का खास ख्याल रखना चाहिए, वहीं इस प्राणायाम को किसे करना चाहिए और किसे नहीं यह जानना और समझना भी बेहद ही जरूरी है। इसके साथ ही और सबसे अहम यह कि इस प्राणायाम को कैसे करें? इसके फायदे क्या हैं? और इस प्राणायाम से जुड़ी सभी जरूरी बातें पढ़ें इस आर्टिकल में।

शीतली प्राणायाम (Sheetali Pranayama) क्या है?

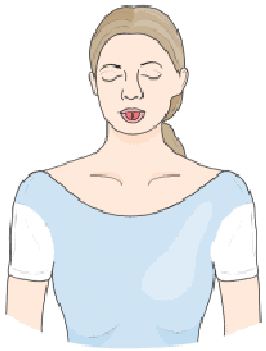

शीतली प्राणायाम (Sheetali Pranayama) कैसे करें?

इस प्राणायाम को करने के लिए निम्नलिखित स्टेप्स फॉलो करें।

स्टेप 1: सबसे पहले रिलैक्स हो जाएं और आराम से बैठ जाएं।

स्टेप 2: अपनी आंखें बंद कर लें।

स्टेप 3: अब अपना मुंह खोलें और जीभ को बाहर लाएं

स्टेप 4: जीभ को इस तरह रोल करें जैसे नली होती है।

स्टेप 5: अगर आपको स्टेप 4 करने में परेशानी महसूस होती है या आप नहीं कर पा रहें हैं, तो आप अपनी जीभ से "ओ" (O) बनाएं।

स्टेप 6: अब जीभ की मदद से सांस अंदर लें और अपनी फेफड़ों को हवा से भरें।

स्टेप 7: अब मुंह बंद करें और धीरे-धीरे सांस नाक से छोड़ें।

स्टेप 8: इस दौरान जब आप सांस लें और आवाज उत्पन्न करें। इस दौरान आप अपने मुंह, जीभ और गले पर ठंड महसूस करेंगे।

स्टेप 9: इस प्राणायाम को आप 5 मिनट तक दुहराएं

शीतली प्राणायाम (Sheetali Pranayama) के फायदें क्या हैं?

प्राणायाम के फायदे --

- इस प्राणायाम को नियमित करने से शरीर के तापमान को नियंत्रण में रखा जा सकता है।
- हमारे दिमाग को शांत रखता है।
- अगर आपको अत्यधिक गुस्सा आता है, तो शीतली प्राणायाम के फायदे आप अपने गुस्से पर काबू भी पा सकते हैं। जो लोग शीतली प्राणायाम करते हैं, उन लोगों को गुस्सा कम आता है।
- इस प्राणायाम को कर मन की शांति महसूस की जा सकती है
- यह प्राणायाम साइकोसोमेटिक डिजीज से ग्रसित लोगों के लिए काफी लाभकारी है। शीतली प्राणायाम के अभ्यास से इस बीमारी से राहत पा सकते हैं।
- वैसे व्यक्ति जो शीतली प्राणायाम को नियमित करते हैं, उन्हें स्किन संबंधी परेशानियां नहीं होती है।
- इस प्राणायाम को नियमित करने से शरीर के अंदर विषाक्त नष्ट होता है और हमारा खून साफ होता है। ऐसे में शरीर के तमाम अंग सुचारू रूप से काम करते हैं।

शीतली प्राणायाम के नुकसान क्या हैं? और किन लोगों को यह प्राणायाम नहीं करना चाहिए?

हर सिक्के के दो पहलु होते हैं, ऐसे में इस प्राणायाम के कुछ नुकसान भी हैं। इसलिए हमें एक्सपर्ट की जरूरत पड़ती है, जो हमें सही और गलत की सीख देते हैं। एक्सपर्ट के अनुसार जानें किसे नहीं करना चाहिए यह आसन,

- मानसिक रूप से बीमार लोगों को यह प्राणायाम नहीं करना चाहिए, क्योंकि उनके शरीर का तापमान कम होता है या तनाव और डिप्रेशन से ग्रसित लोगों को भी यह आसन नहीं करना चाहिए
- ठंडी जगहों में रहने वाले लोगों के साथ सर्दियों के मौसम में इस आसन को कतई नहीं करना चाहिए।

सावधानी

इस प्राणायाम के दौरान निम्नलिखित सावधानी बरतें-

- इसे किसी भी उम्र के लोग कर सकते हैं, लेकिन बेहतर यही होगा कि यदि आपने इससे पहले योग नहीं किया है, तो योग प्रशिक्षक से ट्रेनिंग लेने के बाद ही इसे करें, ताकि आप इस प्राणायाम की गंभीरता को जान सकें।
- **साफ व स्वच्छ जगह पर करें** : शीतली प्राणायाम को साफ व स्वच्छ जगह पर ही करें। जैसे कि सुबह-सुबह पार्क में, ताकि फ्रेश हवा आपको मिल सकें। एक्सपर्ट अश्विनी शुक्ला बताते हैं कि शीतली प्राणायाम को गंदी जगहों पर अभ्यास नहीं करना चाहिए। क्योंकि इसे मुंह खोलकर किया जाता है, श्वांस को मुंह के जरिए अंदर लिया जाता है। ऐसे में गंदी जगह पर इसे करने से संभावनाएं रहती है कि प्रदूषित हवा हमारे शरीर में चली जाए। इसलिए इसे साफ व स्वच्छ जगह पर ही करना चाहिए।
- **लंबे समय तक न करें :** एक्सपर्ट के अनुसार इसे लंबे समय तक नहीं करना चाहिए। क्योंकि मुंह से जब कोई व्यक्ति श्वास लेता है तो संभावना रहती है कि वायु के साथ प्रदूषित हवा के कुछ कण भी शरीर में चले जाएं, इसलिए लंबे समय तक इसे नहीं करना चाहिए।
- **सर्दियों के समय न करें :** शीतली प्राणायाम को सर्दियों के दिनों में कतई नहीं करना चाहिए। क्योंकि इस प्राणायाम को करने से शरीर का तापमान ठंडा होता है, सर्दियों के दिनों में तापमान प्राकृतिक तौर पर ही ठंडा होता है। ऐसे में उन दिनों में इसे करने से स्वास्थ्य को लेकर परेशानी हो सकती है।
- **हमेशा गर्मियों के दिनों में ही करें** : शीतली प्राणायाम को हमेशा गर्मियों के दिनों में ही करना चाहिए। क्योंकि गर्मियों में हमारे शरीर का तापमान काफी बढ़ा हुआ होता है, इसे कर हम शरीर के तापमान को नियंत्रण में रख सकते हैं।

  इन ऊपर बताई गई बातों को ध्यान रखें और इस प्राणायाम को नियम से करें।

एक्सपर्ट की लें राय ताकि फायदा हो, न कि नुकसान

इस आसन को करने के लिए हमेशा एक्सपर्ट की राय लेनी जरूरी होती है ताकि हम शीतली प्राणायाम (Sheetali Pranayama) के फायदों को हासिल कर सकें। गलत जानकारी होने से हमें इसके काफी ज्यादा नुकसान भी हो सकते हैं, जैसे यदि इसे अस्वच्छ व धूल कण वाले इलाके में किया जाए तो संभावनाएं हैं कि हमारे श्वास के जरिए प्रदूषित हवा चली जाएगी। एक्सपर्ट बताते हैं कि क्योंकि मुंह से श्वास लेने से वह बिना प्यूरीफाई हुए शरीर में चला जाता है, इस कारण शरीर में कई विषाक्त धूल कण भी चले जाते हैं, जो इंसान को बीमार कर सकते हैं। इसे शीतली प्राणायाम की प्रैक्टिस हमेशा स्वच्छ जगहों पर ही करनी चाहिए। वहीं गर्मी से राहत पाने के लिए आप इसका अभ्यास कर सकते हैं। सबसे अहम बात यह है कि इसे ठंडे प्रदेशों में रहने वाले लोगों को कतई नहीं करनी चाहिए। इससे उनकी सेहत बिगड़ सकती है।

अगर आप शीतली प्राणायाम (Sheetali Pranayama) से जुड़े किसी तरह के कोई सवाल का जवाब जानना चाहते हैं, तो विशेषज्ञों से समझना बेहतर होगा।

भ्रामरी प्राणायाम

भ्रामरी प्राणायाम हिंदी शब्द भ्रामर से बना है, जिसका अर्थ है भौंरा और प्राणायाम का अर्थ श्वास तकनीक है, इसलिए इसे मधुमक्खी श्वास भी कहा जा सकता है। भ्रामरी (बी ब्रीथ) ध्यान के लिए एक प्रभावी प्राणायाम (श्वास व्यायाम) है। भ्रामरी प्राणायाम थकान और मानसिक तनाव को कम करने में मदद करता है। इस तकनीक में सांस छोड़ने की आवाज मधुमक्खी के गुंजन की आवाज के समान होती है, इसलिए इसे

भ्रामरी प्राणायाम कहा जाता है। मन को शांत करने के लिए भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास बहुत मददगार होता है। आप अपने जबड़े, गले और चेहरे में ध्वनि कंपन को आसानी से महसूस कर सकते हैं। भ्रामरी प्राणायाम करने का तरीका और फायदों के बारे में हमें योगा मास्टर, फिलांथ्रोपिस्ट, धार्मिक गुरू और लाइफस्टाइल कोच ग्रैंड मास्टर अक्षर जी बता रहे हैं।

भ्रामरी प्राणायाम करने का तरीका

- किसी भी आरामदायक मुद्रा (जैसे सुखासन, अर्धपद्मासन या पद्मासन) में बैठें।
- अपनी पीठ को सीधा करें और आंखें बंद करें।
- हथेलियों को अपने घुटनों पर रखें (प्राप्ति मुद्रा में), अपने अंगूठे को ट्रैगस पर रखें।
- आपकी तर्जनी को आपके माथे पर रखा जाना चाहिए।
- मध्यमा उंगली मेडियल कैन्थस पर और अनामिका आपके नथुने के कोने पर होनी चाहिए।
- श्वास लें और अपने फेफड़ों को हवा से भरें।
- जैसे ही आप सांस छोड़ते हैं, धीरे-धीरे मधुमक्खी की तरह एक भनभनाहट की आवाज़ करें, यानी "मम्मम्मम।"
- अपना मुंह पूरे समय बंद रखें और महसूस करें कि ध्वनि का कंपन आपके पूरे शरीर में फैल रहा हो।

भ्रामरी प्राणायाम करने के स्टेप्स

- किसी भी आरामदायक मुद्रा में बैठें। क्रॉस लेग्ड जैसे सुखासन, अर्धपद्मासन या पद्मासन।
- अपनी पीठ को सीधा करें और आंखें बंद करें।
- शरीर को संतुलित करें और इस मौन का अनुभव करें।

- अपनी उंगलियों को सभी उल्लिखित बिंदुओं पर रखें।
- अपनी छोटी उंगली से शुरू करें। अपने नथुने पर, दाएं और बाएं तरफ के बिंदुओं का निरीक्षण करें।
- इन्हें इड़ा और पिंगला या इड़ा नाड़ी के नाम से जाना जाता है और पिंगला नाडी- इड़ा नाड़ी बाईं ओर चलती है और पिंगला नाड़ी दाईं ओर चलती है।
- जब आप इन बिंदुओं को दबा रहे हैं, तो आप वास्तव में इन नाड़ियों या चैनलों पर दबाव डाल रहे हैं। लेकिन आप कोई मांसपेशियों को नहीं दबा रहे हैं।
- भ्रामरी प्राणायाम में, हमारी उंगलियों की युक्तियों पर ये सभी बिंदु वास्तव में इन नाड़ियों को सक्रिय और चैनलाइज़ कर रहे हैं। यह भ्रामरी प्राणायाम के अभ्यास में बहुत मजबूत भूमिका निभाता है।
- अब लयबद्ध रूप से सांस लें और सांस छोड़ते हुए हमिंग बी में आवाज निकालें।
- हमेशा अपने दबाव बिंदुओं से अवगत रहें। अत्यधिक दबाव न डालें, सुनिश्चित करें कि यह कोमल हो।
- अपनी सुविधानुसार धीमी (शांत), मध्यम (मद्यम) या तेज गति (तिवरा गति) में जाएं।
- नाड़ियां आपके नथुने से चलती हैं, आंखों, माथे, सिर, आपकी गर्दन के पिछले हिस्से तक जाती हैं और आपकी पीठ के निचले हिस्से तक पहुंचती हैं।
- अपने कान बंद करके, आप एक शक्तिशाली तरीके से कंपन का अनुभव और निरीक्षण कर सकते हैं और आपके शरीर में भ्रामरी प्राणायाम के लाभ को लाने में मदद करते हैं।

दिशा और अवधि

पूर्व की ओर मुख करें। आप इस श्वास तकनीक का अभ्यास दिन में पांच मिनट के लिए शुरू कर सकते हैं और धीरे-धीरे इसे समय के साथ बढ़ा सकते हैं।

भ्रामरी प्राणायाम के लाभ

1. मन को शांत करता है और शरीर को फिर से जीवंत करता है।
2. स्वाद और सुगंध के प्रति संवेदनशीलता बढ़ाता है।
3. तनाव और चिंता से राहत देता है।
4. आवाज को मधुर बनाता है और स्वर-तंत्र को मजबूत करता है।
5. गले की परेशानी का इलाज करता है।
6. ब्लड प्रेशर को संतुलित करता है।
7. एकाग्रता में सुधार करता है।
8. इसकी सहायता से मन स्थिर होता है, मानसिक तनाव, व्याकुलता आदि कम होती है।
9. लकवा और माइग्रेन को ठीक करने में सहायक।

प्रेग्नेंट महिलाओं सहित सभी उम्र के लोग सांस लेने के इस व्यायाम को आजमा सकते हैं।

प्रेग्नेंसी के समय में, यह एंडोक्राइन सिस्टम के कामकाज को बनाए रखने और विनियमित करने में मदद करता है और बच्चे के जन्म को आसान बनाता है।

यह अल्जाइमर रोग के लिए बहुत अच्छा है।

यह कुंडलिनी जगाने के लिए सबसे प्रभावी प्राणायाम है। आपने शायद देखा होगा, जब आप बांसुरी बजाते हैं, तब आप संगीत को बाहर निकालने के लिए छिद्रों पर दबाव डालते हैं। इसी तरह भ्रामरी प्राणायाम में अगर आप नाड़ियों पर सही दबाव डालना जानते हैं, तो आपकी नाक से आने वाली मधुमक्खी की आवाज एकदम सही होगी। यह सुनिश्चित करता है कि आप इस अभ्यास के लाभों का अनुभव करेंगे।

ध्यान का अर्थ, परिभाषा, प्रकार एवं महत्व

ध्यान चिन्तन की ही एक प्रक्रिया है पर ध्यान का कार्य चित्त करना नहीं अपितु चिन्तन का एकाग्रीकरण अर्थात चिन्त को एक ही लक्ष्य पर स्थिर करना ध्यान कहलाता है। सामान्यतः ईश्वर या परमात्मा में ही अपना मनोनियोग इस प्रकार करना कि केवल उसमें ही साधक निमग्न हो और किसी अन्य विषय की ओर उसकी वृत्ति आकर्षित न हो ध्यान कहलाता है। वस्तुतः ध्यान किया नहीं जाता परन्तु धारणा करते-करते ध्यान लग जाता है, अतः धारणा की उच्च अवस्था ध्यान है। पतंजलि ध्यान को परिभाषित कर सकते है।

तत्र प्रत्यदैक तानता ध्यानम् योग सूत्र III/2

उस देश में ध्येय विषयक ज्ञान या वृत्ति का लगातार एक जैसा बना रहना ध्यान है, तात्पर्य है कि जिसमें धारणा की गई उसमें चिन्त को एक तार ककर देना ध्यान है।

ध्यान किसे कहते हैं ?

चित्त की एकाग्रता को ध्यान कहते हैं। चित्त को एकाग्र करके किसी ओर लगाने की क्रिया। यह योग के आठ अंगो (यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, और समाधि) में से सातवां अंग है जो समाधि से पूर्व की अवस्था है। मन को लगाते हुए मन को ध्येय के विषय पर स्थिर कर लेता है तो उसे ध्यान कहते हैं। यह समाधि-सिद्धि के पूर्व की अवस्था है। ध्यान अष्टांग योग का सातवाँ अंग है।

ध्यान से आत्म साक्षात्कार होता है। ध्यान को मुक्ति का द्वार कहा जाता है। ध्यान एक ऐसी प्रक्रिया है जिसकी आवश्यकता हमें लौकिक जीवन में भी है और अलौकिक जीवन में भी इसका उपयोग किया

जाता है। ध्यान को सभी दर्शनों, धर्मों व संप्रदायों में श्रेष्ठ माना गया है। सभी योगी ध्यान की तैयारी स्वरूप अलग-अलग विधियाँ अपनाते हैं और ध्यान तक पहुँचकर लगभग एक हो जाते हैं।

अनेक महापुरुषों ने ध्यान के ही माध्यम से अनेक महान कार्य संपन्न किए। जैसे- स्वामी विवेकानंद एवं भगवान बुद्ध आदि।

ध्यान शब्द की व्युत्पत्ति

ध्यान शब्द की व्युत्पत्ति ध्यैयित्तायाम् धातु से हुई है। इसका तात्पर्य है चिंतन करना। लेकिन यहाँ ध्यान का अर्थ चित्त को एकाग्र करना उसे एक लक्ष्य पर स्थिर करना है। अत: किसी विषय वस्तु पर एकाग्रता या 'चिंतन की क्रिया' ध्यान कहलाती है। यह एक मानसिक प्रक्रिया है जिसके अनुसार किसी वस्तु की स्थापना अपने मन: क्षेत्र में की जाती है। फलस्वरूप मानसिक शक्तियों का एक स्थान पर केन्द्रीयकरण होने लगता है।

ध्यान की परिभाषा

ध्यान की कुछ परिभाषाएँ इस प्रकार हैं -

महर्षि व्यास के अनुसार- उन देशों में ध्येय जो आत्मा उस आलम्बन की और चित्त की एकतानता अर्थात आत्मा चित्त से भिन्न न रहे और चित्त आत्मा से पृथक न रहे उसका नाम है सदृश प्रवाह। जब चित्त चेतन से ही युक्त रहे, कोई पदार्थान्तर न रहे तब समझना कि ध्यान ठीक हुआ। **सांख्य सूत्र के अनुसार-** ध्यानं निर्विषयं मन:।। 6/25 अर्थात मन का विषय रहित हो जाना ही ध्यान है। **आदिशंकराचार्य के अनुसार** - अचिन्तैव परं ध्यानम्।। अर्थात किसी भी वस्तु पर विचार न करना ध्यान है। **महर्षि घेरण्ड के अनुसार-** ध्यानात्प्रयत्क्षमात्मन:।।अर्थात ध्यान वह है जिससे आत्मसाक्षात्कार हो जाए। **तत्वार्थ सूत्र के अनुसार-** उत्तमसघनस्येकाग्राचिन्ता निरोधो ध्यानगन्तमुहुर्वाति। -त.सू. 9/27अर्थात एकाग्रचित्त और शरीर, वाणी और मन के निरोध को ध्यान कहा गया है।

गरूड़ पुराण के अनुसार- ब्रह्मात्म चिन्ता ध्यानम् स्यात्।।अर्थात केवल ब्रह्म और आत्मा के चिन्तन को ध्यान कहते हैं।

त्रिशिखिब्राह्मणोपनिषद् के अनुसार- सोऽहम् चिन्मात्रमेवेति चिन्तनं ध्यानमुच्यते।।अर्थात स्वयं को चिन्मात्र ब्रह्म तत्व समझने लगना ही ध्यान कहलाता है।

मण्डलब्राह्मणोपनिषद् के अनुसार- सर्वशरीरेषु चैतन्येकतानता ध्यानम्।। अर्थात सभी जीव जगत को चैतन्य में एकाकार होने को ध्यान की संज्ञा दी गयी है।

आचार्य श्रीराम शर्मा के अनुसार- कोई आदर्श लक्ष्य या इष्ट निर्धारित करके उसमें तन्मय होने को ध्यान कहते हैं।

ध्यान की कुछ अन्य व्यावहारिक परिभाषाएँ इस प्रकार हैं -

1. क्लेशों को पराभूत करने की विधि का नाम ध्यान है।
2. ध्यान का तात्पर्य चेतना के अंतर वस्तुओं के अखण्ड प्रवाह होते हैं।
3. अपनी अंत:चेतना (मन) को परमात्म चेतना तक पहुँचाने का सहज मार्ग है।
4. बिखरी हुई शक्ति को एकाग्रता के द्वारा लक्ष्य विशेष की ओर नियोजित करना ध्यान है।
5. मन को श्रेष्ठ विचारों में स्नान कराना ही ध्यान है।

ध्यान के प्रकार

ध्यान तीन प्रकार का है- स्थूल ध्यान, ज्योतिध्यान, सूक्ष्म ध्यान। स्थूल ध्यान में इष्टदेव की मूर्ति का ध्यान होता है। ज्योतिर्मय ध्यान में ज्योतिरूप ब्रह्म का ध्यान तथा सूक्ष्म ध्यान में बिन्दुमय ब्रह्म कुण्डलिनी शक्ति का ध्यान किया जाता है। घेरण्ड संहिता में 3 प्रकार के ध्यान बताये गये हैं-

1. स्थूल ध्यान वह कहलाता है, जिसमें मूर्तिमय इष्टदेव का ध्यान हो।
2. ज्योतिर्मय ध्यान वह है, जिसमें तेजोमय ज्योतिरूप ब्रह्म का चिंतन हो।

3. सूक्ष्म ध्यान उसे कहते हैं, जिसमें बिंदुमय ब्रह्म कुंडलिनी शक्ति का चिंतन किया जाए।

ध्यान का महत्व

निज स्वरूप को मन से तत्वत: समझ लेना ही ध्यान होता है। ध्यान करते करते जब चित्त ध्येयकार में परिणत हो जाता है, उसके अपने स्वरूप का अभाव सा हो जाता है। धारणा में केवल लक्ष्य निर्धारित होता है, जबकि ध्यान में ध्येय की प्राप्ति और उसकी प्रतीति होती है। ध्यान के माध्यम से क्लेशों की स्थूल वृत्तियों का नाष हो जाता है। धारणा, ध्यान और समाधि तीनों को संयम कहा गया है।

संयम की स्थिरता से प्रज्ञा की दीप्ति अर्थात् विवेकख्याति का उदय होता है। इसके अतिरिक्त पातंजल योग सूत्र में संयम से प्राप्त होने वाली अनेक अन्य सिद्धियों का भी उल्लेख हुआ है।

विभिन्न स्थानों पर ध्यान की महत्ता का वर्णन किया गया है; जो इस प्रकार है- गीता –

''यथा दीपो निवातस्थो नेगंते सोपमा स्मृता।

योगिनो यतचित्तस्य युंजतो योगमात्मन:।। 6/19

जिस प्रकार वायुरहित स्थान मे स्थित दीपक की लौ चलायमान नहीं होती, वैसी ही उपमा परमात्मा के ध्यान में लगे हुए योगी के जीते हुए चित्त की कही गई है।

घेरंडसंहिता- '' ध्यानात्प्रत्यक्षं आत्मन:'' 1/11

ध्यान से अपनी आत्मा का प्रत्यक्ष हो जाता है।

अर्थात - ध्यान के द्वारा आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है। इस प्रकार हम यह समझ सकते है कि ध्यान का योग साधना हेतु क्या महत्व है। ध्यान एक विज्ञान है जो हमारे शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास में हमारी सहायता कर हमें अपने संपूर्ण अस्तित्व का स्वामी बनाने में सक्षम है। मानव में विभिन्न शक्तियों का समुच्चय उपलब्ध हैं। प्रत्येक शक्ति के विकास के अपने विधि-विधान हैं। इन

सभी शक्तियों का संगम ही हमारा जीवन है। जब हम ध्यान का अभ्यास शुरु करते हैं तब हम अपने अस्तित्व और अपने व्यक्तित्व के प्रत्येक आयाम के विकास की प्रक्रिया में गतिशीलता लाते हैं।

ध्यान के द्वारा सूक्ष्म मन के अनुभवों को स्पष्ट किया जाता है। जैसे-जैसे हम अपने भीतर, सूक्ष्म अनुभवों को जानने में सक्षम होते जाते है हम अन्तर्मुखी होते हैं, यह आत्मसाक्षात्कार की अवस्था है। आत्म साक्षात्कार का तात्पर्य यहाँ पर सीधा ईश्वर से सम्वन्ध नहीं, वरन् स्वयं के अनुसंधान से है। ध्यान अपने आपको पहचानने की प्रक्रिया है, स्वयं का साक्षात्कार होना, स्वयं को जानना ध्यान के द्वारा ही संभव है। ध्यान प्राचीन, भारतीय ऋषि-मुनियों, तत्तवेत्ताओं द्वारा प्रतिपादित अनमोल ज्ञान-विज्ञान से युक्त एक विशिष्ट पद्धति है, इसके द्वारा मनुष्य का समग्र उत्थान, विकास, उत्कर्ष संभव है।

ॐ शब्द की अपार दिव्यता

वर्तमान/आधुनिक विज्ञान जब प्रत्येक वस्तु, विचार और तत्व का मूल्यांकन करता है तो इस प्रक्रिया में धर्म के अनेक विश्वास और सिद्धांत धराशायी हो जाते हैं।

विज्ञान भी सनातन सत्य को पकड़ने में अभी तक कामयाब नहीं हुआ है किंतु वेदांत में उल्लेखित जिस सनातन सत्य की महिमा का वर्णन किया गया है|

विज्ञान धीरे-धीरे उससे सहमत होता नजर आ रहा है।

ओम् ईश्वर का सर्वश्रेष्ठ नाम है।

मुख्यत: यह समस्त ब्रह्मांड ईश्वर का विस्तृत रूप है। दृश्य ब्रह्मांड ईश्वर के कातिपय गुणों को प्रदर्शित करता है।

जगत का प्रत्येक पदार्थ उस ईश्वर की रचना है। **ओम्** जो यह अक्षर है, यह सब उस ओम् का विस्तार है जिसे ब्रह्मांड कहते हैं।

ॐ शब्द इस दुनिया में किसी ना किसी रूप में सभी मुख्य संस्कृतियों का प्रमुख भाग है| **ॐ** के उच्चारण से ही शरीर के अलग अलग भागों मे कंपन शुरू हो जाती है जैसे की

'अ' :- शरीर के निचले हिस्से में (पेट के करीब) कंपन करता है|

'उ' :- शरीर के मध्य भाग में कंपन होती है जो की (छाती के करीब) .

'म' :- से शरीर के ऊपरी भाग में यानी (मस्तिक) कंपन होती है |

ॐ शब्द के उच्चारण से कई शारीरिक, मानसिक, और आत्मिक लाभ मिलते हैं|

अमेरिका के एक FM रेडियो पर सुबह की शुरुआत **ॐ** शब्द के उच्चारण से ही होती है|

भूत, वर्तमान और भविष्य में सब ओंकार ही है और जो इसके अतिरिक्त तीन काल से बाहर है, वह भी ओंकार है।

समय और काल में भेद है। समय सादि और सान्त होता है परन्तु काल, अनादि और अनंत होता है। समय की उत्पत्ति **सूर्य की उत्पत्ति** से आरंभ होती है।

वर्ष, महीने, दिन, भूत, वर्तमान और भविष्य आदि ये विभाग समय के हैं जबकि काल इससे भी पहले रहता है।

प्रकृति का विकृत रूप तीन काल के अंदर समझा जाता है। प्रकृति तीन कालों से परे की अवस्था है, अत: उसे त्रिकालातीत कहा गया है।

वह यह आत्मा अक्षर में अधिष्ठित है और वह अक्षर है **ओंकार** है और वह ओंकार मात्राओं में अधिष्ठित है।

हमारे ऋषि-मुनियों ने ध्यान और मोक्ष की गहरी अवस्था में ब्रह्म, ब्रह्मांड और आत्मा के रहस्य को जानकर उसे स्पष्ट तौर पर व्यक्त किया था।

वेदों में ही सर्वप्रथम ब्रह्म और ब्रह्मांड के रहस्य पर से पर्दा हटाकर **'मोक्ष'** की धारणा को प्रतिपादित कर उसके महत्व को समझाया गया था।

मोक्ष के बगैर आत्मा की कोई गति नहीं इसीलिए ऋषियों ने मोक्ष के मार्ग को ही सनातन मार्ग माना है।

ओम का यह चिह्न **'ॐ'** अद्भुत है। यह पुरे ब्रह्मांड को प्रदर्शित करती है। बहुत सारी आकाश गंगाएँ ऐसे ही फैली हुई है।

ब्रह्म का मतलब होता है विस्तार, फैलाव और बढ़ना । ओंकार ध्वनि **'ॐ'** को दुनिया में जितने भी मंत्र है उन सबका केंद्र कहा गया है।

ॐ शब्द के उच्चारण मात्र से शरीर में एक सकारात्मक उर्जा आती है | हमारे शास्त्र में ओंकार ध्वनि के 100 से भी ज्यादा मतलब समझाई गयी है |

कई बार ऐसे देखा गया है कि मंत्रों में ऐसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है जिसका कोई अर्थ नहीं निकलता है , लेकिन उससे निकली हुई ध्वनि शरीर के उपर अपना प्रभाव डालती हुई प्रतीत होती है।

Aum Symbol – ओम का चिन्ह 'ॐ'

ओम का यह चिन्ह **'ॐ'** अद्भुत है। यह संपूर्ण ब्रह्मांड का प्रतीक है। बहुत-सी आकाश गंगाएँ इसी तरह फैली हुई है।

ब्रह्म का अर्थ होता है विस्तार, फैलाव और फैलना। ओंकार ध्वनि के 100 से भी अधिक अर्थ दिए गए हैं।

यह अनादि और अनंत तथा निर्वाण की अवस्था का प्रतीक है। आइंसटाइन भी यही कह कर गए हैं कि ब्राह्मांड फैल रहा है।

आइंसटाइन से पूर्व **भगवान महावीर** ने कहा था। महावीर से पूर्व वेदों में इसका उल्लेख मिलता है।

महावीर ने वेदों को पढ़कर नहीं कहा, उन्होंने तो ध्यान की अतल गहराइयों में उतर कर देखा तब कहा।

ॐ को ओम कहा जाता है। उसमें भी बोलते वक्त 'ओ' पर ज्यादा जोर होता है। इसे प्रणव मंत्र भी कहते हैं।

इस मंत्र का प्रारंभ है अंत नहीं। यह ब्रह्मांड की अनाहत ध्वनि है। अनाहत अर्थात किसी भी प्रकार की टकराहट या दो चीजों या हाथों के संयोग के उत्पन्न ध्वनि नहीं। इसे अनहद भी कहते हैं। संपूर्ण ब्रह्मांड में यह अनवरत जारी है। तपस्वी और ध्यानियों ने जब ध्यान की गहरी अवस्था में सुना की कोई एक ऐसी ध्वनि है जो लगातार सुनाई देती रहती है | शरीर के भीतर भी और बाहर भी। हर कहीं, वही ध्वनि निरंतर जारी है और उसे सुनते रहने से मन और आत्मा शांती महसूस करती है तो उन्होंने उस ध्वनि को नाम दिया ओम।

साधारण मनुष्य उस ध्वनि को सुन नहीं सकता, लेकिन जो भी ओम का उच्चारण करता रहता है उसके आसपास सकारात्मक ऊर्जा का विकास होने लगता है।

फिर भी उस ध्वनि को सुनने के लिए तो पूर्णत: मौन और ध्यान में होना जरूरी है। जो भी उस ध्वनि को सुनने लगता है वह परमात्मा से सीधा जुड़ने लगता है।

Aum Meaning in Hindi – ॐ का अर्थ

परमात्मा से जुड़ने का साधारण तरीका है ॐ का उच्चारण करते रहना। ओम् **(ॐ)-OM** परमपिता परमात्मा का वेदोक्त एवं शास्त्रोक्त नाम है। समस्त वेद-शास्त्र ओम् की ही उपासना करते हैं।

अत: ओम् का ज्ञान ही सर्वोत्कृष्ट ज्ञान है। ईश्वर के सभी स्वरूपों की उपासना के **मंत्र ओम** से ही प्रारंभ होते हैं।

ईश्वर के इस नाम को ओंकार एवं प्रणव आदि नामों से ही संबोधित किया जाता है।

' 'ॐ पूर्णमद: पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।

पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवा: शिष्यते॥' '

ओंकार स्वरूप परमात्मा पूर्ण हैं। पूर्ण से पूर्ण उत्पन्न होता है और पूर्ण में से पूर्ण निकल जाने पर पूर्ण ही शेष रह जाता है। ॐ तत् , सत्-ऐसे यह तीन प्रकार के सच्चितदानंदघन ब्रह्म का नाम है। उसी से दृष्टि के आदिकाल में ब्राह्मण वेद तथा यज्ञादि रचे गए।

' अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोज्ध्यात्मुच्यते।'

ॐ नाम का महत्व

परम अक्षर अर्थात ॐ ब्रह्म है, अपना स्वरूप अर्थात् जीवात्मा अध्यात्म नाम से कहा जाता है।

श्रीमद भगवद् गीता में वर्णित है कि **'ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म ॐ इति एकाक्षरं (एक अक्षर)ब्रह्म'** अर्थात एक अक्षर शब्द ही ब्रह्म है।

तीन अक्षरों **अ+उ+म** का यह शब्द सम्पूर्ण जगत एवं सभी के हृदय में वास करता है।

हृदय-आकाश में बसा यह शब्द "अ" से आदि कर्ता ब्रह्म, "उ" से विष्णु एवं "म" से महेश का बोध करा देता है।

यह उस अविनाशी का शाश्वत स्वरूप है जिसमें सभी देवता वास करते हैं।

ओम् का नाद सम्पूर्ण जगत में उस समय दसों दिशाओं में व्याप्त हुआ था जब युगों-पूर्व इस सृष्टि का प्रारंभ हुआ था। उस समय इस सृष्टि की रचना हुई थी।

'प्रजा पति समवर्तताग्रे, भूतस्य जातस्य पतिरेकासीत'

अर्थात सृष्टि के प्रारंभ होने के समय यह एक ब्रह्मनाद था। मनुष्य शरीर पांच तत्वों से बना है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश। यही आकाश तत्व ही जीवों में शब्द के रूप में विद्यमान है।

Aum Meaning Yoga

'ओंकारों यस्य मूलम' वेदों का मूल भी यही ओम् है।

ऋग्वेद पत्र है, सामवेद पुष्प है और यजुर्वेद इसका इच्छित फल है। तभी इसे प्रणव नाम दिया गया है जिसे बीज मंत्र माना गया है।

इस ओम् के उच्चारण में केवल पंद्रह सैकंड का समय लगता है जिसका आधार **8, 4, 3** सैकेंड के अनुपात पर माना गया है।

अक्षर **'अ'** का उच्चारण स्थान कंठ है और **'उ'** एवं **'म'** का उच्चारण स्थान ओष्ठ माना गया है। नाभि के समान प्राणवायु से एक ही क्रम में श्वास प्रारंभ करके ओष्ठों तक आट सैकंड का समय और फिर मस्तक तक उ एवं म् का उच्चारण करके **4, 3** के अनुपात का समय लगता है और यह प्रक्रिया केवल **15** सैकंड में समाप्त होती है।

ओइमकारं बिंदु संयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिन :।

कामदं मोक्षदं चैव ओंकाराय नमो नम:॥

योगी पुरुष ओंकार का नाद बिंदू सहित सदा ध्यान करते हैं और इसका स्मरण करने से सभी प्रकार की कामनाएं पूर्ण होती है।

इससे **मोक्ष** की प्राप्ति होती है। उपरोक्त मंत्र से ओंकार पूजा की जाती है। प्रणव का मन में स्मरण करके भक्त भगवान के किसी भी रूप में भगवद्मय में हो जाता है।

ॐ की ध्वनि से विकृत शारीरिक-मानसिक विचार निरस्त हो जाते हैं।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं-' 'प्रणव: सर्ववेदषु"

सम्पूर्ण वेदों में ओंकार मैं हूं। ओम् की इसी महिमा को दृष्टि में रखते हुए हमारे धर्म ग्रंथों में इसकी अत्याधिक उत्कृष्टता स्वीकार की गई है।

जाप-पूजा पाठ करने से पूर्व ओम् का उच्चारण जीवन में अत्यंत लाभदायक है। सभी वेदों का निष्कर्ष, तपस्वियों का तप एवं ज्ञानियों का ज्ञान इस एकाक्षर स्वरूप **ओंकार** में समाहित है।

त्रिदेव और त्रैलोक्य का प्रतीक :

ॐ शब्द तीन ध्वनियों से बना हुआ है- **अ, उ, म** इन तीनों ध्वनियों का अर्थ उपनिषद में भी आता है। यह **ब्रह्मा, विष्णु और महेश** का प्रतीक भी है और यह **भू: लोक, भूव: लोक और स्वर्ग लोग** का प्रतीक है।

बीमारी दूर भगाएँ : तंत्र योग में एकाक्षर मंत्रों का भी विशेष महत्व है। देवनागरी लिपि के प्रत्येक शब्द में अनुस्वार लगाकर उन्हें मंत्र का स्वरूप दिया गया है। उदाहरण के तौर पर कं, खं, गं, घं आदि। इसी तरह **श्रीं, क्लीं, ह्रीं, हूं, फट्** आदि भी एकाक्षरी मंत्रों में गिने जाते हैं।

सभी **मंत्र** का उच्चारण जीभ, होंठ, तालू, दाँत, कंठ और फेफड़ों से निकलने वाली वायु के सम्मिलित प्रभाव से संभव होता है।

इससे निकलने वाली ध्वनि शरीर के सभी चक्रों और हारमोन स्राव करने वाली ग्रंथियों से टकराती है। इन ग्रंथियों के स्राव को नियंत्रित करके बीमारियों को दूर भगाया जा सकता है।

उच्चारण की विधि

प्रातः उठकर पवित्र होकर ओंकार ध्वनि का उच्चारण करें। ॐ का उच्चारण पद्मासन, अर्धपद्मासन, सुखासन, वज्रासन में बैठकर कर सकते हैं।

इसका उच्चारण **5, 7, 10, 21** बार अपने समयानुसार कर सकते हैं। ॐ जोर से बोल सकते हैं, धीरे-धीरे बोल सकते हैं। ॐ **जप** माला से भी कर सकते हैं।

Om Mantra jaap ke labh

इससे शरीर और मन को एकाग्र करने में मदद मिलेगी। दिल की धड़कन और रक्तसंचार व्यवस्थित होगा। इससे मानसिक बीमारियाँ दूर होती हैं। काम करने की शक्ति बढ़ जाती है। इसका उच्चारण करने वाला और इसे सुनने वाला दोनों ही लाभांवित होते हैं। इसके उच्चारण में पवित्रता का ध्यान रखा जाता है।

शरीर में आवेगों का उतार-चढ़ाव : प्रिय या अप्रिय शब्दों की ध्वनि से श्रोता और वक्ता दोनों हर्ष, विषाद, क्रोध, घृणा, भय तथा कामेच्छा के आवेगों को महसूस करते हैं।

अप्रिय शब्दों से निकलने वाली ध्वनि से मस्तिष्क में उत्पन्न काम, क्रोध, मोह, भय लोभ आदि की भावना से दिल की धड़कन तेज हो जाती है जिससे रक्त में 'टॉक्सिक' पदार्थ पैदा होने लगते हैं। इसी तरह प्रिय और **मंगलमय शब्दों** की ध्वनि मस्तिष्क, हृदय और रक्त पर अमृत की तरह **आल्हादकारी रसायन** की वर्षा करती है। कहते हैं बिना **ओम (ॐ)** सृष्टि की कल्पना भी नहीं हो सकती है।

माना जाता है कि सम्पूर्ण **ब्रह्माण्ड** से सदा **ॐ** की ध्वनी निकलती है। **ॐ (OM)** शब्द तीन अक्षरों से मिलकर बना है- **अ उ म**।

अ का मतलब होता है **उत्पन्न** होना, **उ** का मतलब होता है **उठना** यानी विकास और **म** का मतलब होता है **मौन** हो जाना यानी कि **ब्रह्मलीन** हो जाना।

लेकिन इन सबके अलावा ओम (ॐ) शब्द से इंसान से शारीरिक लाभ भी होते हैं | आईये जानते हैं इन मायावी शब्द के फायदे |

ॐ और थायरॉयड: ॐ का उच्चारण करने से गले में कंपन पैदा होती है जो कि थायरायड ग्रंथि पर सकारात्मक प्रभाव डालती है।

ॐ और घबराहट: अगर आपको घबराहट महसूस होती है तो आप आंखें बंद करके 5 बार गहरी सांसे लेते हुए ॐ का उच्चारण करें।

ॐ और तनाव: यह शरीर के विषैले तत्वों को दूर करता है इसलिए तनाव को दूर करता है।

1- ओंकार जगत की परम शांति में गूंजने वाले संगीत का नाम है।

2. ओंकार का अर्थ है – **"दि बेसिक रियलिटी"** वह जो मूलभूत सत्य है, जो सदा रहता है।

3. जब तक हम शोरगुल से भरे है, वह सूक्ष्मतम् ध्वनि नहीं सुन सकते।

गुरु नानक देव जी भी कहते हैं –

॥ इक्क ओन्कार सत नाम, करता पुरख, निरभऊ, निरवैर, अकाल मूरत, अजूनी सैभं गुर प्रसाद ॥

ईश्वर एक है जिसका नाम ओम है। अतः ओम शब्द का वास्तविक अर्थ जानने – समझने की जिज्ञासा बहुत पहले से पाल रखी थी।

जो भी धर्माचार्य – विद्वान व्यक्ति मिला उससे समझने की कोशिश की। परमार्थ निकेतन ऋषिकेश के महामंडलेश्वर स्वामी असंगानंद महाराज जी से कई बार मिला।

महर्षि दयानंद सरस्वती के ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश का अध्यन किया। कई बार माण्डूक्योपनिषद पढ़ गया जो ओम पर ही है ।

"प्रणव बोध", "ओमकार निर्ण निर्णय " ऐसी पुस्तकें जो ओम पर लिखी गई है , को समझने की कोशिश की।

ऊं – या सही मिश्रण में इन तीन ध्वनियों का उच्चारण, आपको वहां ले जाता है। यह आपको उसके परे नहीं ले जाता, मगर भौतिक प्रकृति की कगार तक ले जाता है।

जब आप वहां खड़े होते हैं, तो अचानक ये सब लोग बहुत दूर नजर आते हैं। यह अच्छी बात है, मगर यह काफी नहीं है।

जब आप ऊं का उच्चारण करते हैं, तो सबसे महत्वपूर्ण चीज यह होती है कि आपका शरीर बहुत सूक्ष्म रूप में एक सीध में आ जाता है।

जब आप शारीरिक **योग** करते हैं, तो कुछ चीजें घटित होती हैं, मगर एक अलग रूप में। मगर जब आप ऊं का उच्चारण करते हैं, तो आपका शरीर एक खास तरह से सीध में, तालमेल में आ जाता है।

जहां आप जब चाहें, छोर तक जा सकते हैं। या अगर आप पर्याप्त जागरूक हैं, तो छोर पर रह सकते हैं। अगर हम चाहें, तो हम सिर्फ **ऊं** साधना बना सकते हैं। एक दिन, सात दिन।

दिन में अठारह घंटे बस **ऊं** का जाप कीजिए। आप देखेंगे, कि यह आपको ऐसी जगह पर ले जाएगा, जहां आप हर समय इसी तरह रहेंगे।

आप जिस चीज को भी देखेंगे, सब कुछ थोड़ा दूर नजर आएगा। यह बहुत अच्छी बात है, क्योंकि एक दूरी से आप हर चीज को ज्यादा साफ-साफ देख सकते हैं।

जब आप उन चीजों से जुड़े होते हैं, तो आप उन्हें उस तरह नहीं देख पाते। आप भी उस दृश्य का एक हिस्सा होते हैं।

आप उस दृश्य या माहौल को उसके असली रूप में नहीं देख पाते। जब आप उस दृश्य से थोड़े दूर होते हैं, तो आप उसे बेहतर तरीके से देख पाते हैं।

अपने आस-पास की हर चीज, जो जीवन है, उसे एक बेहतर नजरिये से देख पाते हैं।

ॐ ईश्वर के निर्गुण तत्त्व से संबंधित है। ईश्वर के निर्गुण तत्त्व से ही पूरे सगुण ब्रह्मांड की निर्मित हुई है। इस कारण जब कोई ॐ का जप **(Aum Ka Jaap)** करता है, तब अत्यधिक शक्ति निर्मित होती है। यह ॐ का रहस्य है।

यदि व्यक्ति का आध्यात्मिक स्तर कनिष्ठ हो, तो केवल ॐ का जप करने से दुष्प्रभाव हो सकता है; क्योंकि उसमें इस जप से निर्मित आध्यात्मिक शक्ति को सहन करने की क्षमता नहीं होती।

ॐ के उच्चारण से मिलता है लाभ – Benefits of Chanting Aum

यह ब्रह्मा, विष्णु और महेश का प्रतीक भी है और यह भू: लोक, और स्वर्ग लोग का प्रतीक भी माना जाता है।

बीमारी दूर भगाएँ :

मंत्रों का उच्चारण जीभ, होंठ, तालू, दाँत, कंठ और फेफड़ों से निकलने वाली वायु के सम्मिलित प्रभाव से संभव होता है।

इससे निकलने वाली ध्वनि शरीर के सभी चक्रों और हारमोन स्राव करने वाली ग्रंथियों से टकराती है। इन ग्रंथियों के स्राव को नियंत्रित करके बीमारियों को दूर भगाया जा सकता है।

इसके लाभ : Health Benefits of om Chanting

- इससे शरीर और मन को एकाग्र करने में मदद मिलेगी।
- दिल की धड़कन और रक्तसंचार व्यवस्थित होगा।
- इससे मानसिक बीमारियाँ दूर होती हैं।

- काम करने की शक्ति बढ़ जाती है।
- इसका उच्चारण करने वाला और इसे सुनने वाला दोनों ही लाभांवित होते हैं।
- इसके उच्चारण में पवित्रता का ध्यान रखा जाता है।

उच्चारण की विधि : How to Chant OM

प्रातः उठकर पवित्र होकर ओंकार ध्वनि का उच्चारण करें।

ॐ (Aum) का उच्चारण पद्मासन, अर्धपद्मासन, सुखासन, वज्रासन में बैठकर कर सकते हैं। आप ॐ (Aum) शब्द को जोर से बोल सकते हैं, या फिर धीरे-धीरे भी बोल सकते हैं। ॐ (Aum) जप माला से भी कर सकते हैं या बिना माला के भी ।

ध्यान क्या है?

ध्यान एक विश्राम है। यह किसी वस्तु पर अपने विचारों का केन्द्रीकरण या एकाग्रता नहीं है, अपितु यह अपने आप में विश्राम पाने की प्रक्रिया है। ध्यान करने से हम अपने किसी भी कार्य को एकाग्रता पूर्ण सकते हैं।

ध्यान के 5 लाभ

1. शांत चित्त
2. अच्छी एकाग्रता
3. बेहतर स्पष्टता
4. बेहतर संवाद
5. मस्तिष्क एवं शरीर का कायाकल्प व विश्राम

ध्यान के 5 स्वास्थ्य लाभ

ध्यान के कारण शरीर की आतंरिक क्रियाओं में विशेष परिवर्तन होते हैं और शरीर की प्रत्येक कोशिका प्राणतत्व (ऊर्जा) से भर जाती है। शरीर में प्राणतत्व के बढ़ने से प्रसन्नता, शांति और उत्साह का संचार भी बढ़ जाता है।

ध्यान से शारीरिक स्तर पर होने वाले लाभ

1. उच्च रक्तचाप का कम होना, रक्त में लैक्टेट का कम होना, उद्वेग/व्याकुलता का कम होना।
2. तनाव से सम्बंधित शरीर में कम दर्द होता है। तनाव जनित सिरदर्द, घाव, अनिद्रा, मांशपेशियों एवं जोड़ों के दर्द से राहत मिलती है।
3. भावदशा व व्यवहार बेहतर करने वाले सेरोटोनिन हार्मोन का अधिक उत्पादन होता है।
4. प्रतिरक्षा तंत्र में सुधार आता है।
5. ऊर्जा के आतंरिक स्रोत में उन्नति के कारण ऊर्जा-स्तर में वृद्धि होती है।

ध्यान के 11 मानसिक लाभ

ध्यान, मस्तिष्क की तरंगों के स्वरुप को अल्फा स्तर पर ले आता है जिससे चिकित्सा की गति बढ़ जाती है। मस्तिष्क पहले से अधिक सुन्दर, नवीन और कोमल हो जाता है। ध्यान मस्तिष्क के आतंरिक रूप को स्वच्छ व पोषण प्रदान करता है। जब भी आप व्यग्र, अस्थिर और भावनात्मक रूप से परेशान होते हैं तब ध्यान आपको शांत करता है। ध्यान के सतत अभ्यास से होने वाले लाभ निम्नलिखित हैं:

1. व्यग्रता का कम होना
2. भावनात्मक स्थिरता में सुधार
3. रचनात्मकता में वृद्धि
4. प्रसन्नता में संवृद्धि

5. सहज बोध का विकसित होना
6. मानसिक शांति एवं स्पष्टता
7. परेशानियों का छोटा होना
8. ध्यान मस्तिष्क को केन्द्रित करते हुए कुशाग्र बनाता है तथा विश्राम प्रदान करते हुए विस्तारित करता है।
9. बिना विस्तारित हुए एक कुशाग्र बुद्धि क्रोध, तनाव व निराशा का कारण बनती है।
10. एक विस्तारित चेतना बिना कुशाग्रता के अकर्मण्य/ अविकसित अवस्था की ओर बढ़ती है।
11. कुशाग्र बुद्धि व विस्तारित चेतना का समन्वय पूर्णता लाता है।

ध्यान आपको जागृत करता है कि आपकी आतंरिक मनोवृत्ति ही प्रसन्नता का निर्धारण करती है।

ध्यान के 3 आध्यात्मिक लाभ

ध्यान का कोई धर्म नहीं है और किसी भी विचारधारा को मानने वाले इसका अभ्यास कर सकते हैं।

1. मैं कुछ हूँ इस भाव को अनंत में प्रयास रहित तरीके से समाहित कर देना और स्वयं को अनंत ब्रह्मांड का अविभाज्य पात्र समझना।
2. ध्यान की अवस्था में आप प्रसन्नता, शांति व अनंत के विस्तार में होते हैं और यही गुण पर्यावरण को प्रदान करते हैं, इस प्रकार आप सृष्टी से सामंजस्य में स्थापित हो जाते हैं।
3. ध्यान आप में सत्यतापूर्वक वैयक्तिक परिवर्तन ला सकता है। क्रमशः आप अपने बारे में जितना ज्यादा जानते जायेंगे, प्राकृतिक रूप से आप स्वयं को ज्यादा खोज पाएंगे।

ध्यान के लाभ कैसे प्राप्त करें

ध्यान के लाभों को महसूस करने के लिए नियमित अभ्यास आवश्यक है। प्रतिदिन यह कुछ ही समय लेता है। प्रतिदिन की दिनचर्या में एक बार आत्मसात कर लेने पर ध्यान दिन का सर्वश्रेष्ठ अंश बन जाता है। ध्यान एक बीज की तरह है। जब आप बीज को प्यार से विकसित करते हैं तो वह उतना ही खिलता जाता है.

प्रतिदिन, सभी क्षेत्रों के व्यस्त व्यक्ति आभार पूर्वक अपने कार्यों को रोकते हैं और ध्यान के ताज़गी भरे क्षणों का आनंद लेते हैं। अपनी अनंत गहराइयों में जाएँ और जीवन को समृद्ध बनाएं।

छात्रों हेतु ध्यान के 5 लाभ

1. आत्मविश्वास में वृद्धि
2. अधिक केन्द्रित व स्पष्ट मन
3. बेहतर स्वास्थ्य
4. बेहतर मानसिक शक्ति व ऊर्जा
5. अधिक गतिशीलता

ध्यान कब और कैसे करना चाहिए?

ध्यान के लाभों को महसूस करने के लिए नियमित अभ्यास आवश्यक है। प्रतिदिन यह कुछ ही समय लेता है। प्रतिदिन की दिनचर्या में एक बार आत्मसात कर लेने पर ध्यान दिन का सर्वश्रेष्ठ अंश बन जाता है। ध्यान एक बीज की तरह है। जब आप बीज को प्यार से विकसित करते हैं तो वह उतना ही खिलता जाता है.

प्रार्थना ध्यान क्या है?

इसे सुनेंरोकेंध्यान के दौरान हम परमसत्ता से जुड़ने का प्रयास करते हैं। जबकि प्रार्थना में हम किसी दैविय शक्ति या परमात्मा से कुछ मागंने की लालसा रखते हैं , अपनी बातो, समस्याओं को ईश्वर को सुनाते हैं । जबकि ध्यान में मन को विचारहीन किया जाता हैं ।

भगवान से प्रार्थना कैसे करें?

इसे सुनेंरोकें- प्रार्थना सरल और साफ तरीके से की जानी चाहिए और आसानी से बोली जाने वाली प्रार्थना करनी चाहिए. – शांत वातावरण में प्रार्थना करना सबसे बढ़िया होता है. – खासतौर पर मध्य रात्रि में प्रार्थना जल्दी स्वीकार हो जाती है. – प्रार्थना को रोज़ एक ही समय पर करना अच्छा होता है.

प्रार्थना का मूल उद्देश्य क्या है?

इसे सुनेंरोकेंप्रार्थना एक धार्मिक क्रिया है जो ब्रह्माण्ड की किसी 'महान शक्ति' से सम्बन्ध जोड़ने की कोशिश करती है। प्रार्थना व्यक्तिगत हो सकती है और सामूहिक भी। इसमें शब्दों (मंत्र, गीत आदि) का प्रयोग हो सकता है या प्रार्थना मौन भी हो सकती है।

ध्यान अभ्यास में मंत्र का पाठ मंगलाचरण और प्रार्थना का क्या महत्व है?

इसे सुनेंरोकेंइस दृष्टिकोण में, प्रार्थना का अंतिम लक्ष्य एक व्यक्ति को दर्शन और बौद्धिक चिंतन

(ध्यान) के माध्यम से देवत्व पर ध्यान केंद्रित करने के लिए प्रशिक्षित करने में मदद करना है ।

ईश्वर की प्रार्थना कैसे करें ताकि मनोकामना पूरी हो?

हे प्रभु, हे परमेश्वर,हे ईश्वर आपके परम चरणों में आपके इस दास का सादर प्रणाम है। हे प्रभु माना कि हम सब से बहुत भूले हुए होंगी। बहुत अपराध हुए होंगे और आप उन अपराधों से नाराज भी होंगे। लेकिन हे प्रभु आप तो कृपानिधान है, आप तो दया के सागर है।

प्रार्थना से क्या तात्पर्य है?

प्रार्थना का तात्पर्य यदि सामान्य शब्दों में बताया जाए तो कह सकते है। कि प्रार्थना मनुष्य के मन की समस्त विश्रृंखलित एवं अनेक दिशाओं में बहकने वाली प्रवृत्तियों को एक केन्द्र पर एकाग्र करने वाले मानसिक व्यायाम का नाम है।

जीवन में प्रार्थना का क्या महत्व है?

प्रार्थना से बड़ा बल, विश्वास, प्रेरणा, आशा और सही मार्गदर्शन मिलता है । ऐसा करने से विनाश होता है और मानवीय गुण जैसे दया, अहिंसा, ममता, परोपकार, सहनशीलता, सहयोग, सादगी, उच्च विचार आदि पैदा होते हैं, उनका विकास होता है । विपत्ति, निराशा और संकट के समय प्रार्थना से बड़ा बल, आत्मविश्वास और शांति मिलती हैं ।

मंगलाचरण कितने प्रकार का होता है?

आचार्य उदयप्रभसूरीश्वर ने कहा कि मंगलाचरण तीन प्रकार के होते हैं – नमस्कार मंगलाचरण, आशीर्वाद मंगलाचरण और निर्देश मंगलाचरण।

ध्यान करते समय कौन सा मंत्र बोलना चाहिए?

ॐ सह नाववतु, सह नौ भुनक्तु, सह वीर्यं करवावहै । तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ अन्नपूर्णे सदापूर्णे शंकर प्राण वल्लभे।

रात को सोते समय कौन सा मंत्र बोलना चाहिए?

इससे भूत-प्रेत का डर खत्म होता है और अनिद्रा की समस्या दूर होती है. -ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्। -राम शिव हरे राम शिव राम राम शिव हरे. रात को सोने से पहले इन सबी मंत्रों का जाप आपके लिए लाभदायक हैं.

मौन क्या हैं और इसका क्या महत्व हैं?

मौन का अर्थ है अंदर और बाहर से चुप रहना। यह अंतरात्मा की और अन्तर्मुख होने की क्रिया है ,जिसमे पहले व्यक्ति बाहर से शांत होता है और धीरे धीरे मानसिक रूप से अंतर की शांति को अनुभूत करता है।

महात्मा गाँधी भी सप्ताह में एक दिन मौन मौन रखा करते थे। रमण महर्षि के सन्दर्भ में कहा जाता है की वे मूक (मौन) उपदेश दिया करते थे।

मौन का सबसे मुख्य प्रयोजन है --

संयम

वाणी का संयम

साधना काल में मौन का विशेष महत्व बताया गया है। मौन रहकर किया गया जप ,ध्यान ,साधना ज्यादा प्रभावशाली सिद्ध होता है। मौन रहकर ही आत्मोन्मुख होकर आत्म -दर्शन संभव है और अन्तर्मुख हुए बिना आध्यात्मिक प्रगति करना असंभव है. इसके अलावा शक्ति संचय करने के लिए भी मौन एक उत्तम क्रिया है।

न बोलने में शास्त्रों में नौ गुण बताये गए है :

1. किसी की निंदा नहीं होगी।
2. असत्य बोलने से बचेंगे।
3. किसी से वैर नहीं होगा।
4. किसी से क्षमा नहीं माँगनी पड़ेगी।
5. बाद में आपको पछताना नहीं पड़ेगा।
6. समय का दुरूपयोग नहीं होगा
7. किसी कार्य का बंधन नहीं रहेगा।

8. अपने वास्तविक ज्ञान की रक्षा होगी और अपना अज्ञान मिटेगा।

9. अंतःकरण की शाँति भंग नहीं होगी।

अतःएव रोज कुछ देर , लगभग आधा -पौन घंटा मौन अवश्य रखना चाहिए।

मौन व्रत : मौन व्रत की धारणा और इसके लाभ, मौन व्रत रखने की विधि

विस्तार

हमारी आज की जीवन शैली में सुकून से ज्यादा हमें मानसिक तनाव और अवसाद देखने को मिलता है। ऐसे में ध्यान और योग को लोगों ने आज की जीवनशैली में अपनाया है। लेकिन अक्सर हम अपने व्यस्त क्रियाकलापों के कारण न ही ठीक से योग कर पाते हैं और न ही ध्यान। ऐसी परिस्थिति से निपटने के लिए मौन व्रत धारण करना भी एक उपाय है। मौन व्रत अक्सर ऋषि मुनियों या साधु संतों से जोड़कर देखा जाता है। यह भारतीय समाज में एक बहुत ही सामान्य प्रथा रही है। प्राचीन काल में संतों ने जीवन में मौन के मूल्य को समझा। वे उस शक्ति को समझते थे जिसमें वे अपनी वाणी को नियंत्रित कर सकते थे। मौन साधना या व्रत कर लिए यह ज़रूरी नहीं है कि इसलिए कई महीने या साल के अभ्यास की आवश्यकता है। यहां मौन व्रत का मतलब सिर्फ शांत या चुप रहने से नहीं है बल्कि यह एक प्रकार की साधना है जिसमें आप अपनी शक्ति के नियंत्रण के बारे में सीखते हैं। कई लोग इसे विपासना से जोड़कर भी देखते हैं। चलिए जानते हैं मौन व्रत की विधि और से होने वाले लाभ के बारे में-

कैसे रखें मौन व्रत

जैसा कि आपको पहले बात चुके हैं कि मौन व्रत का हमारी भारतीय संस्कृति में बहुत महत्व है। हालांकि इस व्रत के लिए कोई भी विशेष विधि नहीं है फिर भी ससप ईद व्रत को किसी भी समय से शुरु कर सकते हैं। आप आरंभ में इसे 1 दिन से शुरू कर सकते हैं और इसके बाद अपनी क्षमता अनुसाए इसकी समय सीमा बढ़ा सकते हैं।

मौन व्रत के लाभ

विचारों और शब्दों पर नियंत्रण: विचारों को शब्दों में और शब्द को ध्वनियों में बदलने की अनुमति न देकर, हम समय के साथ अपनी विचार प्रक्रियाओं पर बेहतर नियंत्रण करना सीख सकते हैं। जब हमारे विचारों को हम नियंत्रित करना सीख लेते हैं, तो स्वयं ही महत्वपूर्ण और अमूल्य विचारों को हम अपने मस्तिष्क या मन में प्रवेश करने की अनुमति देते हैं।

आत्मनिरीक्षण और आंतरिक शांति: मौन व्रत धरण करने से हम आत्मनिरीक्षण करने में सक्षम होते हैं और अपनी आंतरिक शांति की ओर ध्यान केंद्रित करते हैं। अपने विचारों को एक निश्चित अवधि के लिए बाहरी रूप से व्यक्त नहीं करने देने का सचेत विकल्प हमें स्वयं को गहराई में जानने में मदद करता है और साथ हीई आंतरिक शांति प्राप्त करने की दिशा में भी अग्रसर होता है।

क्रोध पर नियंत्रण: आपके आसपास बहुत से ऐसे लोग होंगे जो आपका दिल दुखाकार आपको नकारात्मक ऊर्जा से ग्रसित कर देते हैं जिसके परिणाम स्वरूप क्रोध का जन्म होता है और ये क्रोध आपके व्यवहार पर हावी हो जाता है। क्रोध एक ऐसी भावना है जिस पर नियंत्रण पाना बहुत से व्यक्तियों के लिए कठिन होता है। मौन व्रत के माध्यम से, कोई भावनात्मक आवेगों पर प्रतिक्रिया करना बंद कर देता है, वे उनकी उत्पत्ति का विश्लेषण करना सीखते हैं। मौन व्रत की मदद से व्यक्ति अपनी भावनाओं को बेहतर ढंग से समझता है और भावनाओं पर नियंत्रण करने में सक्षम होता है।

अपनी ऊर्जा को व्यर्थ व्यय होने से बचाना: इस बात को वो लोग बहुत अच्छे से समझ सकते हैं जो अंतर्मुखी स्वभाव के हैं। हम अपने दैनिक जीवन में बहुत सारी ऊर्जा सिर्फ अपने विचारों को लोगों तक पहुँचाने में व्यय कर देते हैं। यदि हम शांत रहकर अंतर्वैयक्तिक संचार में स्वयं को शामिल होने की अनुमति नहीं देते हैं तो हम अपनी ऊर्जा को बचाते हैं।

परिष्कृत व्यक्तित्व: मौन को एक कला माना गया है और जो इसके उपयोग को समझता है वह जीवन के सभी क्षेत्रों में सम्मानित होता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि मौन हमें आधार बनाता है और हमें

अधिक शांत और केंद्रित व्यक्तित्व प्राप्त करने में मदद करता है। मौन व्रत मददगार साबित हो सकता है। मौन वास्तव में स्वर्ण आभा प्रदान करता है इसके अभ्यास से होने वाले लाभ इससे भी कहीं अधिक हैं। इसे अपने लिए आज़माएं, आप कभी नहीं जान पाएंगे कि मौन की आवाज़ों का पता लगाने पर आपको क्या मिलेगा।

ध्यान योग (Meditation) क्या है?

ध्यान योग (Meditation) क्या है? योग मे इसका क्या महत्व है? यह हमारे जीवन को कैसे प्रभावित करता है? इस लेख मे हम इन सब विषयों का अवलोकन करेंगे।

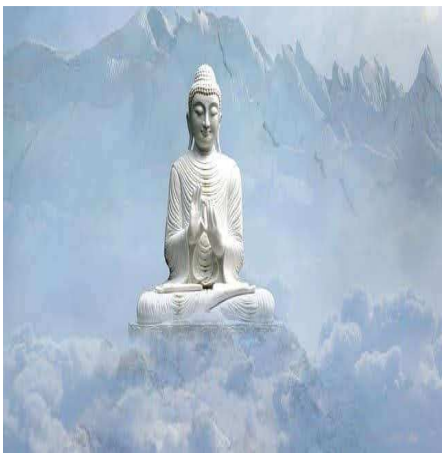

ध्यान योग Meditation.

ध्यान (Meditation) का योग मे एक महत्वपूर्ण स्थान है। अष्टाँगयोग का यह सातवाँ अंग है। चित्त को एकाग्र करके एक बिंदु (Point) पर केंद्रित करना ही **ध्यान** की स्थिति है। ध्यान एक विश्राम की स्थिति भी है। मन मे उठने वाली विचारों को विराम देना **ध्यान** है।

यह क्रिया योग को अंतिम चरण की ओर ले जाने वाली क्रिया है। इस क्रिया का साधना के लिए तो महत्व है ही, लेकिन इसका महत्व शारीरिक स्वास्थ्य के लिए भी है।

इस अवस्था मे पहुँचने पर चित्त की वृतियो का निरोध होने लगता है। मन की एकाग्रता साधना की ओर ले जाती है।

ध्यान का महत्व Importance of meditation.

ध्यान का महत्व योग-साधना मे तो है, इसका महत्व दैनिक जीवन मे भी है।

'ध्यान' शरीर, मन व मस्तिष्क को भी प्रभावित करता है। यह मानसिक शाँति देने वाली क्रिया है।

'ध्यान' योग साधना में।

प्राचीन काल मे **योग** का उद्देश्य "साधना" रहा है। "साधना" के लिए ध्यान का एकाग्र होना अवश्यक है। और 'ध्यान' एकाग्र तभी होगा जब चित्त की वृतियों का निरोध होगा।इसी लिए महर्षि पतंजलि ने **अष्टाँगयोग** का प्रतिपादन किया है।

अष्टाँगयोग मे **धारणा** के बाद ध्यान और समाधी का क्रम बताया गया है। लेकिन यहाँ तक पहुँचने के लिए यह अवश्यक है कि हमारा शरीर स्वस्थ हो। शरीर स्वस्थ रहे इसके लिए योग में **शुद्धि क्रियायें** बताई गई है।शुद्धि क्रियाओ का पालन करने के बाद अष्टाँगयोग का पालन जरूरी है।

ध्यान के लिए **स्थूल शरीर** के साथ **शुक्ष्म शरीर** का स्वस्थ होना भी अवश्यक है। इसके लिए संतुलित आहार और विचारों के शुद्धि जरूरी है।

अष्टाँगयोग मेंं विचारों की शुद्धि के लिए **यम - नियम** का प्रावधान है। और स्थूल शरीर को स्वस्थ रखने के लिए **आसन,** तथा प्राणों की पुष्टि के लिए **प्राणायाम** बताये गये है।

ध्यान का महत्व दैनिक जीवन मे।

दैनिक जीवन में भी ध्यान का महत्व है। साधना के और भी कई प्रकार है।

भक्तियोग--भक्ति साधना है।

कर्मयोग--कर्म साधना है।

उसी प्रकार एक संगीतकार के लिए 'संगीत', नृतक के लिए 'नृत्य', कलाकार के लिए 'कला' तथा विद्यार्थी के लिये 'अध्ययन' एक साधना है।

कर्मयोग साधना।

आप चाहे कोई भी कार्य कर रहे है आप को सफलता तभी मिलेगी जब उस कर्म को "साधना" मान कर करते है। संगीतकार अपने संगीत मे, कलाकार अपनी कला मे तथा एक विद्यार्थी अपनी Study मे लीन हो जाये यह साधना ही है। लेकिन यह कर्म-साधना तभी सम्भव है जब ध्यान की एकाग्रता हो।

ध्यान का व्यापक अर्थ है। ध्यान का अर्थ Meditation तो है ही। ध्यान का अर्थ सावधानी भी है। दैनिक जीवन मे हम कोई भी कार्य करते है जैसे कि Driving करते है, Office-work करते है या किसी मशीन पर काम करते है, हमे **ध्यान** की अवश्यकता है। इसके लिए मन का एकाग्र होना जरूरी है। यदि मन की एकाग्रता नही है तो वह कार्य बे-ध्यानी से किया जायेगा। और उस कार्य मे सफलता मिलनी कठिन है।

ध्यान की बाधाएँ।

ध्यान योग मे रुकावट डालने वाली बाधाएँ कौन सी हैं? ध्यान मे रुकावट डालने वाली कई बाधाएँ है। लेकिन इसका मुख्य कारण हमारा "मन" है। मन चंचल है। बहिर्मुखी से अन्तर्मुखी होना ही ध्यान का उद्देश्य है। ध्यान योग मे मुख्य दो बाधाएँ है।

1. **शारीरिक व्याधि।**
2. **मानसिक अस्थिरता।**

शारीरिक व्याधि।

शरीर का अस्वस्थ होना **ध्यान** की सबसे बडी बाधा है। ध्यान के लिए शरीर का स्वस्थ होना जरूरी है। रोग की अवस्था मे ध्यान असम्भव है।

ध्यान करने से पहले शरीर को स्वस्थ रखना जरूरी है। शरीर को स्वस्थ रखने के लिए ही पहले आसन व प्राणायाम किये जाते हैं। अत: शरीर को स्वस्थ रखने के लिए आसन और प्राणायाम नियमित करें। संतुलित आहार ले।

मानसिक अस्थिरता।

यदि मन:स्थिति ठीक नही है तो यह भी **ध्यान योग** में बाधक है। 'शरीर' और 'मन' दोनो एक दूसरे को प्रभावित करते है। यदि 'मन' की स्थिति ठीक नही है तो शरीर अवश्य प्रभावित होगा। यदि 'शरीर' मे कोई रोग है, अस्वस्थता है तो मन भी ठीक नही रहेगा।

मन के विचलित होने के अन्य और भी कई कारण हैं। चिंता, भय, ईर्ष्या, लोभ, क्रोध, व मोह आदि मन को विचलित करने का कारण बनते है।

मन की स्थिरता के लिये **यम-नियम** का पालन करें। शुद्ध आचरण रखे। नियमित योग करें।

योगाभ्यास मे ध्यान योग।Meditation in Yoga.

योगाभ्यास में ध्यान योग (Meditation) क्या है? ध्यान योग कैसे करें?

- योगाभ्यास मे सब से पहले आसन करें।
- आसन के बाद प्राणायाम करें।
- प्राणायाम के बाद ध्यान करें। यही योगाभ्यास मे ध्यान का सही क्रम है।

'ध्यान' योगासन में।

योगासन मे भी ध्यान का महत्व है। आसन करते समय ध्यान को चक्रो पर केंद्रित रखें। नये व्यक्ति आसन करते समय ध्यान को अपने शरीर के प्रभावित अंगों पर केंद्रित करे।

ध्यान से पहले आसन व प्राणायाम करे। आसन व प्राणायाम के बाद ही ध्यान करें।

आसन क्या है? --- पतंजलि योग सुत्र में आसन के बारे मे कहा गया है **"स्थिरसुखम् आसनम्"**। इसका अर्थ है कि स्थिरता पूर्वक और सुख पूर्वक किये जाने वाले पोज को आसन कहा जाता है। इसका सीधा अर्थ यह है कि आसन हमेशा स्थिरता से सुखपूर्वक किये जाने चहाएँ।

- खुले, हवादार, प्राकृतिक वातावरण मे योग करे।
- कपङा या चटाई का आसन बिछाएँ।
- सरलता से किये जाने वाले आसन ही करें।
- नये व्यक्ति कठिन आसन न करें।
- जिस आसन को करने मे सहजता लगे और सुख की अनुभूति हो वह अवश्य करें। तथा उस आसन की पूर्ण स्थिति मे रुकने का प्रयास करें।
- आसन की पूर्ण-स्थिति मे धीरे-धीरे जाएँ। और धीरे-धीरे ही वापिस आएँ। झटके से आसन मे जाना या झटके से वापिस आना हानिकारक होता है।
- आसन करते समय आँखे कोमलता से बँद रखें।
- नये व्यक्ति **ध्यान** को अपने शरीर पर केन्द्रित रखें। अनुभवी साधक **ध्यान** को चक्रों पर केंद्रित करें।
- आसनों के अंत में **शव आसन** करें। बंद आँखों से सम्पूर्ण शरीर पर ध्यान केंद्रित करे।

'ध्यान' प्राणायाम में

प्राणायाम का अर्थ है प्राणों को आयाम देना।इस क्रिया से प्राण शक्ति की वृद्धि होती है।श्वसन प्रणाली सुदृढ होती है। प्राणायाम में श्वासो को उचित तरीके से लेना, रोकना तथा छोङना बताया जाता है। यह क्रिया ध्यान लगाने मे सहायक होती है।

- प्राणायाम करने के लिए पद्मासन मे बैठना उत्तम है। यदि पद्मासन मे नही बैठ सकते है तो सुखासन या आरामदायक स्थिति मे बैठें।
- पीठ व गरदन को सीधा रखे। रीढ को झुका कर न रखें।
- हाथ घुटनों पर ज्ञानमुद्रा मे रखें।
- आँखें कोमलता से बंध करें और **ध्यान** को श्वासों पर केंद्रित करें।
- प्राणायाम अपनी क्षमता के अनुसार करे।
- नियमित साधक बन्ध व कुम्भक का प्रयोग करें।
- नये साधक श्वास को अधिक देर तक न रोके।केवल सरल प्राणायाम करें।
- प्राणायाम मे **ध्यान** को श्वासों पर केंद्रित करें।

ध्यान योग

आसन और प्राणायाम करने के बाद हमारा शरीर ध्यान के लिए तैयार हो जाता है।प्राणायाम करते समय जिस आसन मे बैठे है, उसी स्थिति मे बैठें।

- ध्यान योग के लिए भी पद्मासन की स्थिति मे बैठना उत्तम है। पद्मासन मे नही बैठ सकते है तो आरामदायक स्थिति में बैठे।
- दोनों हाथ ज्ञानमुद्रा मे रखें।
- आँखे कोमलता से बंद करें।

- सबसे पहले श्वासों का अवलोकन करें।आसन-प्राणायाम से प्रभाव को अनुभव करें।
- **ध्यान** को श्वासों पर ले आएँ। आती-जाती श्वासों को अनुभव करें। मन मे उठने वाले सभी विचारो को छोङ कर **ध्यान** केवल श्वास पर केंद्रित रहे।
- कुछ देर तक इस स्थिति मे रुकने के बाद ध्यान को 'आज्ञा चक्र' मे केंद्रित करे। आज्ञा चक्र की स्थिति हमारे माथे के मध्य मे है। बंद आँखों से माथे के मध्य भाग का अवलोकन करें।
- आज्ञा चक्र मे ध्यान की स्थिति बहुत महत्व पूर्ण है। इसको तीसरा नेत्र भी कहा गया है।इस स्थिति मे पहले साकार भाव मे ठहरें। इस स्थिति मे आप अपने किसी भी आराध्य (जिसकी आप आराधना करते हैं) के दर्शन कर सकते है। या इस **तीसरे नेत्र** से ज्योति पुञ्ज का अवलोकन करें। इसी स्थिति में आप किसी प्राकृतिक वातावरण (जैसे कि नदी, झरना, आदि) का अवलोकन कर सकते हैं।
- कुछ देर इस स्थिति मे ठहरने के बाद निराकार भाव मे आ जाएँ। सभी विचारों को छोङ कर निर्विचार अवस्था मे बैठें।
- स्थिति मे कुछ देर ठहरने के बाद धीरे धीरे ध्यान की अवस्था से बाहर आएँ। दोनो हथेलियों को आपस में रगङे और हाथो से पलको को सहलाएँ।

ध्यान योग के लाभ

- ध्यान योग करने से शरीर मे ऊर्जा एकत्रित होती है। इससे विशेषत: मस्तिष्क प्रभावित होता है।
- स्मृति (मेमोरी पावर) मे वृद्धि होती है।
- यह मानसिक परेशानियों को दूर करने मे सहायक है।
- रक्तचाप (BP) सामान्य रहता है। तनाव को दूर करता है।
- चेतना जागृत होती है तथा आत्मिक बल मिलता है।
- यह क्रिया स्वयं को स्वयं से जोङती है। इस मे अत्मावलोकन (Self Study) किया जाता है।
- यह एक आध्यात्मिक क्रया है। यह साधना मे सहायक है।

लेख सारांश :-

ध्यान योग अष्टाँगयोग का एक महत्वपूर्ण अंग है। यह हमारे जीवन को प्रभावित करता है। शरीर व मन की अस्वस्थता ध्यान की बाधाएँ हैं। शरीर को स्वस्थ रखने के लिए पहले आसन व प्राणायाम करें।

ॐ ओ३मकार का महत्व –

ऐसा कहा जाता है ॐ नादवाणी (ध्वनि) पूरे जगत के सभी सजीव और निर्जीव प्राणियों सभी में ओंकार (ॐ) नाद उत्पन्न हो रहा है इसलिए ओंकार को अतुल्य माना गया है। यहां ॐ की उत्पत्ति "अ उ म" अर्थात त्रिमूर्ति शक्ति से हुई है। जिसमें अ जीवन का कारक है, ऊ विकास का, तथा म् विनाश (शून्य) का कारक माना जाता है।

हिंदुधर्मो में सबसे पहला मंत्र ॐ को माना जाता हैं ॐ को त्रिदेवों से भी जोड़ा जाता है अ ब्रह्म, उ विष्णु तथा म रुद्र रूप है। ॐ अर्थात प्रवणनाद इसे सभी मंत्रो का उद्गम भी कहते हैं हिंदू गाथाओं के अनुसार जब समूचे विश्व में कुछ भी नहीं था तो केवल एक ही ध्वनि उत्सर्जित होती थी वह था ओम (ॐ) स्वयं परमात्मा से निकलने वाले इस नादवाणी जो समूचे ब्राम्हण में विधमान हैं इसका उपयोग मात्र साधना (योग अभ्यास) व आन्तरिक शुद्धि तक सीमित नहीं, सामान्य व्यक्ति भी दैनिक जीवन में इसका उपयोग कर लाभान्वित हों सकते हैं

मंत्र एक संस्कृत शब्द है जो मन और त्रा शब्द से मिलकर बना है। मंत्र एक अक्षर, शब्द या वाक्य हों सकता है जिसे मेडिटेशन या ध्यानाभ्यास के वक्त दोहराया जाता हैं आइए जानते है एक मंत्र उच्चारण के पीछे क्या रहस्य छुपा होता है...

मंत्रा मेडिटेशन क्या है ओ३म (ॐ) का महत्व

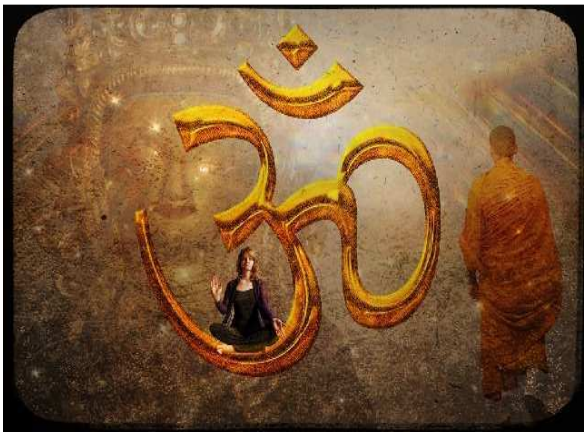

मंत्रा मेडिटेशन जिसे संस्कृत में "नाद" या "नादवाणी" कहते हैं मंत्र उच्चारण का मुख्य उद्देश्य मन को एकाग्र, स्थिर और सजग बनाना होता है इसे उन विचारों के कैद से दूर ले जाना जों हमारी एकाग्रता में विघ्न उत्पन्न करते हैं।

मंत्र उच्चारण करने से मात्र एकाग्रता विकसित नहीं होती हैं बल्कि यह सुनने में जितना कठीन लगता हैं उतना हैं नहीं, यह तो हमारे अन्तर मन की आवाज़ होती हैं मंत्र उच्चारण का मुख्य उद्देश्य स्वयं को उन बाधाओं से मुक्त करना होता है जो हमें पूर्ण सजगता प्राप्त करने से रोक रहे होते है।

मंत्र अथवा किसी ध्वनि पर ध्यान केंद्रित कर हम अपनी चेतना को उन बाधाओं से दूर हटना सिखा रहें होते हैं जों हमारे राह में बाधा उत्पन कर रहे होते हैं।

नाद योग की शुरूआत – Nad yoga ki shuruaat

क्या आप कभी शांत चित्त होकर अपने अन्तर मन से आने वाली आवाज को सुनने का प्रयत्न किया है? नादयोग की पहली शुरूआत ही होती हैं अपने अन्तर की आवाज़ को सुनना

इसलिए कुछ समय रुके, आंखें बंद कर, अपने अन्तर मन की आवाज़ को सुने, यहीं नाद योग की पहली शुरूआत है:

नाद योग क्या है? – Nad yoga kya hai

कुछ देर के लिए मान लिजिए, एक अनजान रास्ते से घर लौटते वक्त आप भटक जाते हैं और कहीं गुम हो जाते हैं...!

शाम का समय था, सुमसान सड़क, कुछ ही देर में चारों तरफ़ घना कोहरा छाने लगता, रात्रि होने को हैं अंधेरा भी छाने लगा है आप खुद को उस सुनसान सड़क पर अकेले चलते हुए पाते हैं जहां अंधेर की वजह से आप केवल कुछ फीट ही आगे देख पा रहे होते हैं आपको जल्द से जल्द घर पहुंचना है लेकिन रास्ता नहीं मालूम

रात्रि में इस तरह भटक जाने का डर धीरे-धीरे आपके दिलों जहन में आने लगा है। आप अपने घर की याद आ रही हैं अपने परिवार, प्रियजनों को याद कर रहे हैं जो घर पर आपके आने का इंतजार कर रहे होंगे

जैसे-जैसे आप अपने प्रियजनों को याद करते हैं उनके प्यार को अपने अंदर महसूस करते हैं आपका डर जैसे खत्म होने लगा हैं। लेकिन अचानक...! कुछ दूरी पर आप एक आवाज सुनते हैं जो पहचानने योग्य तो नहीं लेकिन जानी पहचानी है

आप उस दिशा में आगे बढ़ते हैं कुछ देर बाद आवाज भी बंद हो जाती है। आखिर वह आवाज कहां से आ रही थी, आप लगातार उसी दिशा में आगे बढ़ने लगते हैं

बढ़ते – बढ़ते दूर कहीं आपको एक उजाला दिखने लगता है ध्यान से देखने पर आपको लाइट की चमक दिखती है

जैसे ही आप थोड़ा और करीब पहुंचते हैं आप उस आवाज को पहचान जाते हैं जैसे वह आपके किसी प्रियजन की हो, जो आपका नाम लेकर पुकार रहे हो। उस दिशा में और आगे बढ़ने पर आप महसूस करते हैं आप अपने कमरे की खिड़की के अंदर देख पा रहे होते हैं

आपने अपने घर का रास्ता ढूंढ लिया हैं। रोज हम सभी इसी प्रकार अपनी व्याकुलता और बाधाओं के अंधकार में उस आवाज की खोज करते हैं जो हमें सही रास्ता दिखा सके, हमें अपनी मंजिल तक पहुंचा सकें...

कोई रोशनी, जो हमने इशारा दे, हमें कौन सा रास्ता चुनना चाहिए!

नाद योग में वह आवाज आपके अंतर्मन की आवाज होती है वह चमकती हुई रोशनी आपके अंतरात्मा से निकलने वाला प्रकाश होता है।

नाद योग सुनने वाला योग है यह एक तरीका है जिससे व्यक्ति अपने अंदर झांक पाता है और अंत में सभी व्याकुलताओं और बाधाओं से खुद को मुक्त कर पाता है।

योगा क्या है – yoga kya hai?

पश्चिम में जब योग की बात की जाती हैं अक्सर इसे "हठयोग" से जोड़ा जाता हैं जिसमें क्रमानुसार शारीरिक आसनों का अभ्यास किया जाता है।

हालांकि, इसके अलावा भी अन्य योग के प्रकार हैं जो बिल्कुल भी शारीरिक नहीं है जैसे –

- कर्म योग
- भक्ति योग
- ज्ञान योग
- राजयोग

योग का अर्थ होता है जुड़ना, मिलना या सम्मिलित होना, योग एक संस्कृत शब्द है

नादयोग के अभ्यास हम खुद को इस भ्रम से बाहर आने लगते हैं कि हम सब अलग हैं उस अन्तर आत्मा के प्रकाश से, उस आवाज के कंपन से

ध्वनि के चार स्तर – Four level of sound

ध्वनि के चार स्तरों की व्याख्या प्राचीन भारत के वैदिक काल के दार्शनिकों और मृदुभाषीयों से मिलती है इसका वर्णन वेदों में भी मिलता हैं – (कुंडलिनी उपनिषद)

1. जब एक व्यक्ति कुछ बोलने वाला होता है उसकी शुरुआत "प्रा" ध्वनि से होती हैं यह पूर्णतः शुद्ध रूप होता है जहां ना कोई शब्द होता और ना उसका कोई आकार – प्रकार
2. "पश्यंती" ध्वनि के इस स्तर में व्यक्ति अपना अभिप्राय, इरादा व्यक्त कर चुका होता है
3. "मध्यमा" ध्वनि और विचारों के मध्य
4. "विकाहारी" इस स्तर में व्यक्ति अपने विचारों और शब्दो को बाहरी दुनिया में व्यक्त कर रहा होता है।

लेकिन "नादयोग" में यह प्रक्रिया बाहर से अंदर की ओर होती है। जब हम उच्च स्तर पर पहुंच जाते हैं तब हम आसानी से बाहरी दुनिया और विचारों से जुड़ पाते हैं।

विकाहारी – Vikahari

यह बाह्य दुनिया में ध्वनी का पहला स्तर होता है जिसे हम कानों से सुन सकते हैं। इसमें हजारों आवाजें जो हम अपने रोजमर्रा के जीवन में सुनते हैं भले हमारा ध्यान उन पर केंद्रित ना हो

मध्यमा – Madhyama

ये ध्वनि का दूसरा स्तर है जिससे हम सोच या विचार करते हैं हमारा मस्तिष्क अनेकों ध्वनियों को अपने अंदर एकत्रित किए हुए हैं जैसे – गीत, संगीत

पश्यंति – Pashyanti

यह ध्वनि का तीसरा स्तर है ध्वनि का चित्रण रुप, जहां ध्वनि और विचार चित्रों का मिलन होता है उदाहरण – जब आप किसी किताब या नॉवेल को पढ़ रहे होते हैं तब शब्दों को आप संभावित चित्रों में कल्पना कर पाते हैं या रेडियो सुनते हुए उस दृश्य की कल्पना कर पाते हैं

परा – Para

यह ध्वनि का चौथा स्तर है इसे आप अनेक रूपों में समझ सकते हैं जैसे – शब्दों के परे, ध्वनि के परे, इंद्रियों के परे, कल्पनाओं के परे

"परा" हमारे आंतरिक विचारों से जुड़ाव के पहले की अवस्था है

मानवीय दृष्टिकोण में ॐ का महत्त्व:

ओ३म की ध्वनी चिकित्सा रूप में भी कार्य करती है इस ध्वनी से निकलने वाली ऊर्जा सच में प्राण ऊर्जा प्रवाह करने वाली होती हैं।

किंतु जन सामान्य केवल इसकी बाहरी नैसर्गिक रूप को जानते हैं। शायद उन्हें यह ज्ञात नहीं बाहरी बदलाव जिसमे भौतिक विचारधाराओं का मिलन होते रहता, इसमें आन्तरिक बदलाव नहीं कर सकता।

ॐ अर्थात प्रवण (नादवाणी) वर्तमान में अनेकों बदलावो से गुजरा हैं जिसने लोगो को भी एक नया दृषटिकोण दिया, परंतु जैस जैसे मनुष्य भौतिकता रूपी दृष्टिकोण को अपनाने लगा है वह अपने अंतरिक दृष्टिकोण को क्षति पहुंचाने लगा है।

अर्थात यदि हम ॐ नाद वाणी को इसके मूल स्वरूप में अपनाए तो ही हम इसका पूर्णतः लाभ उठा सकेंगे।

ओम (ॐ) मेडिटेशन के लाभ

मंत्रों का प्रयोग चमत्कारिक लाभ पहुंचाता है खासकर यदि आपको मन नियंत्रित रखने में परेशानी होती हो, तो मंत्र उच्चारण आपके लिए अच्छा उपाय साबित होगा, हालांकि, ध्यान तो आप अनेकों तरीकों से कर सकते हैं मगर एक विधि सबके लिए समान कारगर नहीं होती, आइए जानते है मेडिटेशन (मंत्रा मेडिटेशन) से कौन कौन से लाभ होते हैं –

फोकस बढ़ता – increase Focus

मेडिटेशन सभी के लिए आसान नहीं, वहीं कुछ लोगों को ध्यान में मन शांत और केंद्रीत रख पाने में कठिनाई होती हैं मंत्र का उपयोग करना एकाग्रता पाने में भरपूर सहायता करता हैं

जब किसी मंत्र का उच्चारण आप बार-बार अपने मन में करते हैं तब वहीं आपके सजगता का केंद्र बन जाता है। जिससे मन अन्य चीजों में भटकने से बच जाता हैं

आध्यात्मिकता की चढ़ाव

बहुत से ध्यानाभ्यासी ये मानते हैं मंत्र उच्चारण से उत्पन्न ऊर्जा, कंपन गहरे ध्यान में पहुंचने में मदद करता है गहराई से ध्यान करना शरीर में उर्जा प्रवाह की अड़चनों को दूर करता हैं

आप उस मंत्र का चुनाव करें जो आपको आत्मशांति प्रदान करें

दिमागी विकास

वैज्ञानिक शोधों से पता चलता हैं मेडिटेशन दिमागी स्वास्थ्य को बेहतर बनाता हैं मस्तिष्क में रक्त प्रवाह को बढ़ाता है कार्यक्षमता में बढ़ोतरी करता है

कुछ बदला जो आप देखेंगे –

- बेहतर मानसिक स्वास्थ्य
- तनाव रहित
- कम थकान

शोध के अनुसार मंत्रों का उच्चारण करना दाएं और बाएं मस्तिष्क में बेहतर संचालन को प्रेरित करता हैं

सांसो पर नियंत्रण

ध्यानाभ्यास में मंत्रों का उच्चारण स्वंसो में प्राकृतिक लय लाता है। हालांकि, इस ध्यानिक लय से आदि होने में समय लग सकता है लेकिन मंत्रों का स्वांसो के लय के साथ जुड़ना आपके लिए बहुत फायदेमंद हो सकता है

कुछ अन्य लाभ जो आप महसूस करेंगें –

- सजगता बढ़ती
- तनाव कम होता
- मानसिक शांति मिलती
- आत्मप्रेम बढ़ता
- सकारात्मकता बढ़ती

कैसे मंत्रा (ॐ) मेडिटेशन का अभ्यास करें

जब आप अपने लिए मंत्र का चुनाव कर ले तब आपको उसका उपयोग करना शुरू कर देना चाहिए, आइए जानते हैं कैसे आप मंत्र के साथ ध्यनाभ्यास कर सकते हैं –

- आरामदायक आसन चुने : एक शांत और स्वच्छ स्थान का चुनाव करें जहां आप बिना विघ्न उत्पन्न हुए ध्यानाभ्यास कर सकें, आरामदायक आसन चुन कर बैठे, इसे आप जमीन में, कुर्सी पर, लेट कर अथवा चलते हुए भी कर सकते हैं हस्त मुद्राओं का उपयोग कुछ लोगो को गहरे ध्यान में जाने में मदद करता है
- समय निश्चित करें : एक निश्चित समय तय करें, कितनी देर आप मेडिटेशन करने वाले हैं चाहें तो 5 मिनट से शुरुआत कर सुविधा अनुसार समय सीमा बढ़ा सकते हैं।
- लंबी गहरी स्वंसो से शुरुआत करें : ध्यनाभ्यास की शुरुआत स्वंसो पर केंद्रित होकर करना सबसे उचित माना जाता है देखे कैसे फेफड़ों में हवा भर तथा खाली हो रही है।
- मंत्र उच्चारण शुरु करें : लंबी व गहरी स्वंसो के साथ मंत्र का उच्चारण शुरू करें, मंत्र को आप ऊंचे स्वर में दोहरा सकते हैं या केवल अपने मन में इसका उच्चारण करें

- स्वंसो से मार्गदर्शन ले : जब ध्यनाभ्यास के बीच में मन अस्थिर होने लगें, आपको स्वंसो के लय से मार्गदर्शन लेना चाहिए
- मन भटकने पर दिशा बदले : ध्यान में यदि आप महसूस करें जैसे मन के विचार आपका ध्यान भटका रहे हैं बलपूर्वक आपको उनसे दूर भागने की चेष्टा नहीं करनी, बस उनके प्रति सजग बने रहे और अपने मंत्र उच्चारण पर केंद्रित रहे
- ध्यनाभ्यास की समाप्ति : जब आपका निर्धारित समय समाप्त हो जाए, तुरंत भागने का प्रयास न करें बल्कि कुछ समय दे अपने मन और शरीर को सामान्य अवस्था में आने के लिए धीरे-धीरे सामान्य अवस्था में आए